सम्पादन परामर्श
डॉ. प्रभा पंत-09411196868
अतिथि संपादन
के. पी. अनमोल-
सम्पादक
आशा शैली -9456717150, 8958110859 7055336168,
सह सम्पादक/समन्वयक
चन्द्रभूषण तिवारी
-9415593108/8707467102
सह सम्पादक/शोध प्रबंधक
डॉ. विजय पुरी-09816181836
सह-सम्पादक
विनय सागर जायसवाल
-7520298865
मुख्य प्रबंधक
मंजु पाण्डे 'उदिता'-7017023365
बालोद्यान
पवन चौहान-09805402242
विधि-परामर्श
प्रदीप लोहनी-09012417688
प्रचार सचिव
डॉ. विपिन लता 9897732259
पुष्पा जोशी 'प्राकाम्या'
8267902090

सम्पादकीय कार्यालय एवं पत्र व्ययवहार का पता-
-साहित्य सदन, इन्दिरानगर-2
पो.-लालकुआँ, जिला-नैनीताल
(उत्तराखण्ड) पिन-262402
मो.-09456717150, 7078394060, 7055336168, 8958110859
Email-asha.shaili@gmail.com

मूल्य-एक प्रति 25/-,
वार्षिक 100/-,
आजीवन 1000/-,
संरक्षक सदस्य 5100/-

संरक्षक सदस्यः-
डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र-09412992244, शिव बाबू मिश्र -09412750094, अर्श अमृतसरी-09716317725, डॉ. नवीन कुमार श्रीवास्तव- 09212444369, प्रकाश चन्द्र लोशाली -9456114762, राजकुमार जैन 'राजन' 09828219919, केशव कुमार पटेल-9919352975, डॉ. विमला व्यास-9452780735, डॉ. शीला त्रिपाठी-9453257279, बृजेश चन्द्र श्रीवास्तव-9451023854, अरविंद कुमार यादव -9125628814, श्रीमती ममता पाण्डेय-9453770833, मौजी लाल पटेल-9936380977, ए.के. पवार-9810059715, डॉ. ए.जे. अब्राहम- 9447375381, **डॉ. श्रीमती उषा मिश्रा-9450610608, श्री चंदन प्रताप सिंह-7317559999, श्री सर्वेश सिंह शौनक-7007164024, श्री रूप चन्द शर्मा-9935353480, डॉ. मदन मोहन ओबेराय,** राम मूरत चौहान-**9415885622,** डॉ. नीतिका नैन-9536379106,

परामर्शः-
डॉ. श्यामसिंह 'शशि'-09818202120,
डॉ. धनंजय सिंह-09810685549
डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक' -07417619828

विशेष सहयोगी
पंकज बत्रा (लालकुआँ) -9897142223, निर्मला सिंह बरेली, -9412821608 सत्यपाल सिंह 'सजग' (लालकुआँ) -09412329561, राधेश्याम यादव -80066722221, दर्शन 'बेज़ार' (आगरा) -9760190692, डॉ. राकेश चक्र (मुरादाबाद) -9456201857, सूरत भारती, (हि.प्र.) -09418272934 कृष्णचन्द्र महादेविया, (मगडी हि.प्र.) -09857083213 , डॉ. वेदप्रकाश प्रजापति 'अंकुर' (हल्द्वानी) -9412943042, स्नेहलता शर्मा (लखनऊ)-9450639976 सुषमा भण्डारी, (दिल्ली)-09810152263, निरुपमा अग्रवाल (बरेली) -9412463533, आलोक भूषण त्रिपाठी-8423099899

1.शैल-सूत्र में प्रकाशित रचनाओं के प्रति सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
2.लेखक अपने विचार प्रेषण के लिए स्वतन्त्र है।
3. शैल-सूत्र परिवार के सभी सदस्यों के पद अवैतनिक हैं।
4.प्रत्येक कानूनी विवाद का निपटारा पत्रिका के सम्पादकीय कार्यालय का विधि क्षेत्र होगा।

शुल्क, खाता सं 024110100000073, कोड सं. IFSC; AUCB 0000025 अल्मोड़ा अर्बन बैंक, शाखा लालकुआँ अथवा भारतीय स्टेट बैंक शाखा तरुवाला, पाँवटा साहब (हि.प्र.) कोड सं. IFSC; SBIN 0000703 खाता सं 30116574461 में जमा करायें।

स्वामी, प्रकाशक, तथा मुद्रक आशा शैली (इन्दिरा नगर-2, लालकुआँ, जि. नैनीताल) ने एच.जे. इंटरप्राइजेज़, खानचन्द मार्केट, हल्द्वानी (नैनीताल) से मुद्रित कराया। सम्पादक आशा शैली (इन्दिरा नगर-2, लालकुआँ, जि. नैनीताल-262402)

क्षेत्रीय सहयोगी

1. Dr. L.C. Sharma, IIRD Complex,
Bye-pass Road, shanan,
Sanjauli, Shimla-6 (H. P.)
mo. 09418014761
iirdsml@gmail.com

2. श्री कृष्ण चन्द्र महादेविया
गाँव महादेव, तह. सुन्दर नगर,
मण्डी (हि.प्र.) 175018

3. डॉ. विजय पुरी,
ग्राम पदरा, डा. हंगलोह, त. पालमपुर, कांगड़ा
(हि. प्र.) 7018516119, 9816181836

4-श्रीमती शिवा धरावेश,
20/7, दुर्गा कालोनी तरुवाला,
पाँवटा साहिब, जि. सिरमोर-173025 (हि.प्र.)
मो. 08894892999

5. चन्द्रभूषण तिवारी
ग्राम टी.टी.अब्दलपुर, डाकघर हरिसेन गंज,
(मऊआईमा) प्रयागराज-212507
मो. 9415593108, 8707467102
cbtiwari04091966@gmail.com

6. दिनेश पाठक 'शशि'
28, सारंग विहार, रिफ़ाइनरी नगर,
मथुरा- (उत्तर प्रदेश)
9412727361,
ईमेल- drdinesh57@gmail.com

7. अंजना छलोत्रे 'सवि',
जी-48, फारच्यून ग्लोरी, ई-8, एक्सटेंशन,
द्वितीय तल, भोपाल-39 (म.प्र.)
मो. 08461912125
anjana.savi@gmail.com

8. श्रीमती पूर्णिमा ढिल्लन
फ्लैट नं.-401, बिल्डिंग-5, अशोक अस्टोरिया, गोवर्धन विलेज, गंगापुर रोड, नासिक-422222
मो. 7767943298

9. केरल
Dr. A. J. Abraham,
ANCHANIYIL A.K.G.
Unichira road,
Changampuzha nagar, post-Kochi-33', Kerala. 9447375381

10- Dr. Sumangala Mummigati
'Chinmay' 4th Cross,
Shreepad Nagar,
Near Rani Chennamma Nagar,
Dharwad, Karnatak.
mo-7619164139

विधा	लेखक	पृष्ठ
सम्पादकीय: हिन्दी ग़ज़ल विमर्श की कविता है	-के.पी. अनमोल	4
वैचारिकी: समकालीन हिन्दी ग़ज़ल	-चन्द्रभूषण तिवारी	5
धरोहर: आर्यों का मूल निवास..................................डॉ. विपिनलता		6
समकालीन हिन्दी ग़ज़ल में प्रतीक-विधान - डॉ. ब्रह्मजीत गौतम		9
हिन्दी ग़ज़ल में बुजुर्गों की स्थिति		11
-डॉ. भावना		
हिन्दी काव्य में ग़ज़ल -ज़हीर कुरेशी		14
लेखन का उद्देश्य सदैव जीवन का परिष्कार करना होता है: हरे राम समीप		16
ग़ज़ल का सामाजिक सरोकार - डॉ. काकोली गोराई		18
गहरी जड़ें		21
घनी छाँव		22
महकते फूल		25
फलदार शाखाएँ		29
पल्लव		
गीतः-एक नदी गुज़र गई-डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र, मैं छूट गया -सूर्य प्रकाश मिश्र		35
बालोद्यान (कहानी) बिल्कुल मेरे पापा जैसे	- अरविंद कुमार 'साहू'	36
नई कलम		
दोहे/ हमारे सैनिक -अनुज पाण्डे, दादी माँ-मुस्कान, पेड़ -कशिश		37
कहानीः-मदगामी मद्धकंद	-श्रीमती रजनी शर्मा 'बस्तरवी'	38
संतुलन	-शैलेश तिवारी	40
लघुकथायें दावानल-दीपक पाण्डे, निशक्त घुटने -कुणाल शर्मा		41
रुका हुआ पंखा -बलराम अग्रवाल, रिजेक्ट-गोविंद शर्मा		42
भारत दर्शनः- शिवसागर	-कुहेली भट्टाचार्जी	43
समीक्षा -भावों की अभिव्यक्ति	-डॉ. सीमा शर्मा	46
साधना के जीवन पर	-अभिलाष अवस्थी	48

मानव की जिन्दगी में दो ही शब्द बहुत खास होते हैं, प्रेम और ध्यान। शर्त एक ही है, दोनों में अहंकार के लिए स्थान नहीं होता।

शैल-सूत्र
जुलाई-सितम्बर-2020

हिन्दी ग़ज़ल 'विमर्श की कविता' है

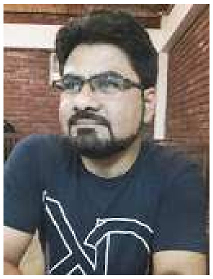

सम्पादकीय

हिन्दी ग़ज़ल केवल 'देवनागरी में लिखी ग़ज़ल' नहीं है। हिन्दी ग़ज़ल अपनी परिभाषा, अपना स्वरूप और प्रकृति निर्मित कर चुकी है। ऐसी ग़ज़ल, जो आम बोलचाल की भाषा में कही गयी हो और जो जन सरोकारों को अपने भीतर गहराई से समेटे हुए हो। जो हिन्दी कविता की परम्परा का निर्वहन करती हुई हिन्दी के मुहावरों, प्रतीकों और मिथकों के माध्यम से अपनी बात रखती हो। वह ग़ज़ल, हिन्दी ग़ज़ल है। हिन्दी ग़ज़ल की भाषा, शैली, कहन, परिवेश, सरोकार और उद्देश्य सब उर्दू या उससे पहले की ज़ुबानों की ग़ज़ल से अलग हैं।

दुष्यन्त कुमार के बाद पाँच दशक के छोटे-से अरसे में हिन्दी ग़ज़ल ने अपने आपको मज़बूती के साथ प्रस्तुत किया है। वही हिन्दी ग़ज़ल, जिसका समय-समय पर अलग-अलग तरह से जितना हो सका, तिरस्कार किया गया। उर्दू ग़ज़ल से लेकर हिन्दी कविता के स्वयंभू रचनाकारों-आलोचकों द्वारा इसे 'फ़िज़ूल' साबित करने की कोशिश की गयी, अख़बारी कतरन कहा गया लेकिन वही हिन्दी ग़ज़ल आज इतनी समर्थ होकर खड़ी है कि अच्छे-अच्छे उर्दू ग़ज़लकार स्वयं को हिन्दी का रचनाकार बताते नज़र आते हैं तो वहीं हिन्दी कविता के बड़े नाम मंच से शेरों के ज़रिये अपनी अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाते हैं।

हिन्दी ग़ज़ल ने अपने आप को आम जनमानस के इतना क़रीब खड़ा कर दिया कि वह जन-जन की होकर रह गयी है। इसकी लोक के बीच उपस्थिति की कई वजहें हैं। उनमें एक वजह यह भी है कि ग़ज़ल ने आम इंसान के जीवन को बहुत शिद्दत से अपने भीतर समेटा है। उसके दुःख, पीड़ाओं, परेशानियों, भावनाओं, हर्ष-विषाद, प्रमोद, त्योहार-उत्सव आदि को पुनः शब्द दिए हैं। इससे पूर्व छंदबद्ध कविता, लोक-मानस में गहराई तक उतरी हु ई थी, अब हिन्दी ग़ज़ल उसी मज़बूती से लोक के बीच अपना स्थान सुनिश्चित कर रही है। हिन्दी ग़ज़ल आम इंसान की समस्याओं पर उनकी ही भाषा में चिंतन करती है। यही चितन उसे 'विमर्श की कविता' बनाता है।

हिन्दी ग़ज़ल के यहाँ तक के सफ़र में दुष्यन्त कुमार और उसके बाद की पीढ़ियों के ग़ज़लकारों के योगदान का नतीजा है कि आज के ग़ज़लकारों को एक विस्तृत फ़लक नसीब हुआ है। आज के ग़ज़लकारों के सामने ढर्रे से अलग हज़ारों विषय हैं, जिन पर वे अपने-अपने अन्दाज़ में बात कर सकते हैं। वे नए-नए शब्दों/प्रतीकों का इस्तेमाल करते हुए अपनी ग़ज़लों में विभिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर विमर्श कर रहे हैं। नए मुहावरे गढ़ रहे हैं। वरिष्ठ ग़ज़लकारों के सानिध्य में हिन्दी ग़ज़ल के युवा रचनाकार अपना बेहतरीन देते हुए ग़ज़ल के साथ हिन्दी कविता परम्परा को भी आगे बढ़ा रहे हैं।

अतिथि सम्पादक
के. पी. अनमोल

समकालीन हिन्दी ग़ज़ल

यूँ तो ग़ज़ल का इतिहास सात-आठ सौ साल पुराना कहा जाता है, पर हम आज के परिदृष्य में देखते हैं कि ग़ज़ल को भारत की धरती पर पाँव जमाए भी पर्याप्त समय हो चुका है। पिछली लगभग पाँच दहाइयों से ग़ज़ल की गूँज बराबर बनी हुई है। भाषाओं की दुरूहता से टकराती काव्य की इस विधा को अपने समय के साथ चलना भली प्रकार आता है।

यह बात मैंने ऐसे ही नहीं कही। विद्वतजन जानते हैं कि ग़ज़ल अरबी फ़ारसी से चलकर उर्दू के दरवाजों को फलांगती हुई भारत की सारी दूसरी भाषाओं पर भी लगभग अधिकार कर चुकी है, फिर हिन्दी से दूर कैसे रह सकती है। इसको यूँ समझा जा सकता है कि आज कम या ज्यादा, हिन्दी का हर रचनाकार कविता-कहानी के साथ ग़ज़ल के क्षेत्र में भी हाथ आज़मा रहा है। यह हिन्दी रचनाकार और ग़ज़ल, दोनों के लिए सुखद है क्योंकि हिन्दी का फलक विस्तृत है।

चाहे हमारी नई पीढ़ी को अंग्रेज़ी बहुत प्यारी है फिर भी वह ग़ज़लों के नशे से नहीं छूट सकी। यह ठीक है कि किसी समय ग़ज़ल शुद्ध श्रृंगार रस की काव्यमंजरी हुआ करती थी परन्तु आज की ग़ज़ल ने शायद ही कोई विषय छोड़ा हो जहाँ अपनी पैंठ नहीं बनाई। परन्तु इसके बाद भी अपने मूल स्वभाव को नहीं छोड़ा। प्रेम तो जीवन का मूल तत्व है, जिसे पशु-पक्षी भी अनुभव करते हैं और व्यक्त भी करते हैं फिर ग़ज़ल जैसी कोमल विधा इसे कैसे छोड़ सकती है। सामाजिक व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए प्रेम को रिश्तों में विभाजित किया गया है परन्तु मूल स्वरूप तो प्रेम ही है।

ग़ज़ल ने अपने विकास की असीम संभावना के द्वार खोलते हुए अध्यात्म, दर्शन, प्रेम, राजनीति, देशभक्ति, राष्ट्रीय चेतना, आदि को तो सहेजा ही है इसके साथ ही सामाजिक सद्भाव, वर्तमान की उठापटक, पतनशील मानवीय मूल्यों आदि को साथ लेकर चलते हुए हमें आश्वस्त किया है कि उसमें अपार क्षमता है।

वर्तमान समय में देखा जाए तो गायन में गीतों के स्वर धुंधले होकर ग़ज़ल के स्वर मुखर हो गए हैं। ग़ज़ल और गेयता का सीधा-सीधा सम्बंध है। गीतों पर ग़ज़ल के प्रभुत्व का एक यह भी बड़ा कारण है। दूसरा कारण ग़ज़ल का सरलीकरण है। आज हम जिसे हिन्दी मानकर चल रहे हैं वह आम आदमी की भाषा है और आज ग़ज़ल इसी पायदान पर चलकर आम आदमी तक पहुँच रही है। तीसरा और सबसे बड़ा कारण ग़ज़ल का समाज की हर परेशानी, हर समस्या को साथ लेकर चलना भी है।

आम आदमी से ग़ज़ल को जोड़ने के लिए जितना प्रयास दुष्यन्त कुमार ने किया है, उतना ही अदम गोंडवी ने और उतना ही बलीसिंह चीमा ने भी किया है। आज के ग़ज़लकारों में महिलाओं का योगदान भी कम नहीं। देश के हर कोने में आज के दौर में आम आदमी के दुख-दर्द को अपनी ग़ज़लों में ऐसे ही स्थान देने वाले बहुत-से रचनाकार हिन्दी साहित्य के भण्डार को निरन्तर भर रहे हैं। ऐसे में शैलसूत्र भी अपना योगदान देने से पीछे कैसे रह सकती है। एक छोटा-सा प्रयास है यह शैलसूत्र का समकालीन हिन्दी ग़ज़ल पर केन्द्रित अंक।

-चन्द्रभूषण तिवारी

आर्यों के मूल निवास स्थान

–डॉ. विपिनलता

भारतीय आर्यों के मूल निवास के विषय में पुरातात्त्विक तथा अन्य प्रमाणों का अभाव है। केवल कुछ साहित्यिक प्रमाण उनके द्वारा रचित साहित्य में मिलते हैं जिनके आधार पर विद्वानों ने समय-समय पर अपने भिन्न भिन्न विचार प्रस्तुत किये हैं। कुछ विद्वान उन्हें भारत का मूल निवासी मानते हैं जबकि कतिपय विदेशी विद्वान उन्हें मध्य एशिया के किसी स्थान से आया हुआ स्वीकार करते हैं। मैं इन सभी विचारों को यहाँ प्रस्तुत करना चाहूँगी। मैं केवल अपना विचार प्रस्तुत करूँगी जो तत्कालीन साहित्य के आधार पर निर्धारित किया गया है। तत्कालीन दो महत्वपूर्ण ग्रन्थ ऋग्वेद तथा जेंदा अवस्था के कतिपय प्रकरणों को इस समस्या के समाधान में आधारभूत तथ्य माना जा सकता है। पौराणिक साहित्य को भी आधार मानकर इन तथ्यों की पुष्टि की गई है।

जेंदा अवस्था पारसियों का धार्मिक ग्रन्थ है तथा ऋग्वेद का समकालीन है। पारसी लोग आर्यों की सबसे पहली शाखा के प्रतिनिधि हैं और ईरान में निवास करते हैं तथा आज भी शारीरिक लक्षणों के आधार पर भारतीय आर्यो से पूर्ण समानता रखते हैं। जेंदा अवस्ता वेन्दिदाद प्रकरण में आर्यों द्वारा अपने पूर्वजों की भूमि त्याग देने की बात कही गई है। एर्यनसेवेइर्जो या आर्य बीज को त्याग देने की बात कही गई है। वेइर्जो का अर्थ बीज होता है। आर्य बीज शब्द आर्यावृत शब्द से ही मिलता जुलता है। जेंदा अवस्ता में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि दुष्ट शक्तियों ने प्रदेश को प्राकृतिक आपदाओं का घर बना दिया है। वहाँ रहना कठिन हो गया था। ऋग्वेद पर रचित ब्राह्मण ग्रंथ शतपथ में 'तदुप्येत्तरस्य गिरे मनोरवसमर्पणम्' द्वारा व्यक्त किया गया है। जिसका अर्थ है कि उत्तर गिरि से नीचे की ओर धकेल दिए गए। ईरान के इतिहास में पी-साइकस ने लिखा है, कि ''अब हम जानते हैं कि आर्य लोग उत्तर से आए और जैसे कि अधिकतर घुमक्कड़ लोगों के विषय में प्रचलित है कि आर्यों का मूल निवास मध्य एशिया के शीतोष्ण कटिबंधीय घास के मैदानों में खुरासान के सुड़या उत्तर में हो सकता है। अधिक सम्भावनाओं के साथ सोवियत रूस के मैदानों में हो सकता है। ईरान के आर्यों में एक धारणा प्रचलित है, कि उन्होंने अपना प्राचीन मूल स्थान इसलिए छोड़ा क्योंकि बुरी शक्तियों ने उसको बर्फ़ से ढकेल दिया था और वह स्थान निवास के योग्य नहीं रह गया था। सम्भवतः इसका यह अर्थ निकलता है कि वे लोग निरंतर जलवायु परिवर्तन द्वारा आगे की ओर ठीक उसी प्रकार ढकेल दिए गए थे जिस प्रकार मंगोलिया के मानव समुदाय निरन्तर शुष्क होती जलवायु के द्वारा पश्चिम की ओर धकेल दिए गए और ये मंगोलियन जहाँ तक गए उन देशों की सभ्यता को पददलित करते चले गए।" ईरान और भारत के आर्य ईश्वर के लिए एक जैसे शब्दों का प्रयोग करते थे। पूजा की वस्तुओं का स्वरूप भी एक जैसा ही था। ऋग्वेद के असुर शब्द को जेंदा अवस्ता में अहूर और ऋग्वेद के देव शब्द को जेंदा अवस्ता में दयेव लिखा गया है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि भारत के आर्य और ईरान के आर्य एक ही समुदाय के लोग हैं। बस, अन्तर इतना है कि ईरान के आर्यों का सम्बन्ध स्थानांतरित होने वाले पहले जत्थे से है, जबकि भारत के आर्यो का सम्बन्ध स्थानांतरित होकर आने वाले बाद के जत्थों से है।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमें पौराणिक साहित्य का आश्रय लेना पड़ेगा। इस संदर्भ में अग्नि पुराण में वर्णित आंशिक जलप्लावन का वर्णन करना आवश्यक है। विशिष्ट बात यह है कि हिन्दू धर्म, ईसाई धर्म तथा इस्लाम धर्म तीनों में उक्त आंशिक जलप्लावन का वर्णन मिलता है। यूनानी विद्वानों ने भी थोड़े बहुत नाम परिवर्तन करके अग्नि पुराण की इस घटना का वर्णन किया है। उक्त आंशिक जल प्लावन का वर्णन शतपथ ब्राह्मण (1-8-1) महाभारत, मत्स्य पुराण, श्रीमद्भागवत, अग्नि पुराण, बाइबिल की जैनिसिस 7-9 में, चाल्डिया की धर्म पुस्तक डैल्यूज टैबलेट में, केसलस कानसाइज साइक्लोपीडिया पृष्ठ 396- यूनान, रोम और मिस्र के साहित्य में मिलता है।

भौगोलिक दृष्टिकोण से यदि उक्त से सम्बंधित देशों का क्षेत्रीय विवरण देखा जाए तो अवश्य ही यह घटना यूनान, भारत और अरब देशों के आसपास ही घटित हुई होगी। साथ ही यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि चीनी धर्म ग्रंथों में इस प्रकार की किसी समकालीन घटना का वर्णन नहीं है। उक्त विवरण से स्पष्ट है कि आंशिक जलप्लावन की इस घटना का सम्बन्ध यूनान, भारत, इजराइल, सीरिया, गोल्डन आदि अरब देशों के निकटवर्ती क्षेत्र से है जो

अपेक्षाकृत चीन से अधिक दूर रहा होगा। ईसाई तथा इस्लाम धर्म में इस को नुहार के जलप्लावन की संज्ञा दी गई है जबकि अग्नि पुराण में इसको मनु का जलप्लावन कहा गया है। यदि आंशिक जलप्लावन का सम्बन्ध भारत के उत्तर में फैले हिमालय से होता तो बाइबिल व कुर-आन में इसका विवरण मिलना असम्भव था। इस घटना का सम्बन्ध अवश्य उस स्थान से है जो इस्लाम के पैगम्बरों और ईसाई धर्म गुरुओं के निकट किसी क्षेत्र में रहा होगा। वह क्षेत्र आवश्यक रूप से कैस्पियन सागर (कश्यप सागर) और काला सागर के निकटवर्ती क्षेत्र में रहा होगा।

संक्षेप में अग्नि पुराण में दर्शायी गई कथा इस प्रकार है, ''जब महासागर ब्रह्मा जी की आज्ञा से अपनी सीमाओं से बाहर हो गया तथा सार्वभौमिक विनाश करने लगा तो मनु या नुह जो पर्वत के निकट बसता था, उस समय कृतमाला नदी में देवताओं को जल का तर्पण कर रहा था, तब एक छोटी-सी मछली उसके कमण्डल में आ घुसी। इस मछली के कमण्डल में प्रवेश करते ही आकाशवाणी हुई, 'इस मछली की रक्षा करो।' मनु मछली को अपने साथ ले आए और एक गड्ढा खोदकर उसमें पानी भरकर मछली को उस में छोड़ दिया। मछली ने कुछ बड़ी होने पर आग्रह किया कि आप मुझे अब समुद्र में छोड़ दें। जब भयंकर जलप्लावन होगा तब मैं एक सींग वाली मछली आपको वहीं मिलूंगी। आप अपनी नाव को मेरे सींग से बाँध देना। मैं उसको हिमालय पर छोड़ दूँगी। मनु अपने परिवार, सगे सम्बन्धियों, प्रत्येक जीवित वस्तु के बीजों सहित एक नाव में सवार हो गये। मछली ने विस्तृत रूप धारण कर लिया और नाव को लेकर हिमालय पहुँच गई। इस प्रकार वे सभी लोग हिमालय पहुँचकर जलप्लावन से बच गए। यहाँ पर कृतमाला नदी से तात्पर्य कुरा नदी से है जो काकेश्यस पर्वत के दक्षिण में ईरान की उत्तरी सीमा के साथ बहती है।

अब सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि एशिया महाद्वीप के मध्यवर्ती भाग में ये जलप्लावन क्यों और कैसे हुआ? इस आंशिक जलप्लावन का मुख्य कारण जलवायु परिवर्तन था जिस ओर अधिकतर धार्मिक मनीषियों का ध्यान ही नहीं गया। तीसरे हिमयुग की समाप्ति के साथ ही आज से लगभग 10'000 वर्ष पहले हिमयुग का संक्रमण काल प्रारंभ हुआ। संक्रमण काल के पूर्वार्ध में जलवायु अपेक्षाकृत गर्म हुई और हिमयुग काल की बर्फ़ भी पिघलनी प्रारंभ हुई।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार तृतीय हिमयुग की समाप्ति के बाद 10'000 वर्ष का संक्रमण काल आता है। इस प्रकार का संक्रमण काल प्रत्येक हिमयुग के बाद आता है। अब सन् 2050 से चौथा हिमयुग प्रारम्भ होगा। इस का अर्थ है कि इस समय हम लोग दो हिमयुगों के बीच के संक्रमण काल में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। एक हिमयुग की कुल अवधि 10'000 वर्ष होती है। संक्रमण काल में अचानक परिवर्तन होते हैं। पृथ्वी की जलवायु अचानक गर्म होने लगती है, बर्फ़ तेजी से पिघलती है, फलतः अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ जन्म लेती हैं। वनों का विस्तार होता है। इस प्रकार संक्रमण काल में अनेक मानव सभ्यताओं का विकास होता है। मानव गतिविधियों में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन होते हैं। इस प्रकार इस संक्रमण काल में कई मानव सभ्यताएँ विकसित हुईं जिस में भारत की आर्य मानव सभ्यता और संस्कृति विशेष उल्लेखनीय है। युग परिवर्तन के समय कुछ प्राकृतिक अप्रत्याशित घटनाएँ होती हैं, जैसे जलप्लावन, चक्रवातीय तूफान, भयंकर आम्लिक अतिवृष्टि, अनावृष्टि, महामारियाँ आदि। उक्त प्राकृतिक घटनाओं के अतिरिक्त कुछ मानवीय अप्रत्याशित घटनायें जैसे भूमण्डलीय उष्मीकरण, जैसे ओजोन परत का क्षतिग्रस्त होना। यह भी भू-मण्डलीय उष्मीकरण चौथे हिमयुग की प्रतिद्वंद्वी घटना है। जैसे ही भू-मण्डली उष्मीकरण अपने चरम पर पहुँचकर सन् 2050 में समाप्त होगा वैसे ही चौथे हिमयुग का प्रादुर्भाव होगा जो 10,000 वर्ष तक चलेगा। उक्त वैज्ञानिक विवरण से स्पष्ट है कि हम युग परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं। भारत का साहित्य तथा संस्कृति इस तथ्य की पुष्टि करते हैं

मनु स्मृति में मनु जी ने युगों की गणना इस प्रकार की हैः-

0 चत्वार्याहुः सहस्त्राणि वर्षाणां तत्कृतं।
सत्य तावच्छति संध्याशूऽच तथानिधि।।1-69

0 इतरेषु संसध्येषु संसध्याशंशेषु च त्रिषु।
एकापायेन वर्तन्ते सहस्त्राणि शतानि च।। 1-70

कैस्पियन सागर और काला सागर का निकटवर्ती क्षेत्र जो समुद्र तल से -200' से लेकर +200 तक ऊँचा है, काला सागर और कैस्पियन सागर की बर्फ़ पिघलने के कारण ये सम्पूर्ण क्षेत्र जल से भर गया। इसी को आंशिक जलप्लावन की संज्ञा दी गई। ये घटना आज से लगभग 7000 वर्ष पहले घटित हुई। संक्रमण काल जो दस हज़ार वर्ष का है, सन् 2050 में समाप्त होने जा रहा है। सन् 2050 के आसपास एक और आंशिक जलप्लावन होगा जिसमें पृथ्वी की 1/3 जनसंख्या प्रभावित होगी। इस समय यह जलप्लावन अत्यन्त धीमी गति से क्रियाशील है। जो सन् 2050 में चरमोत्कर्ष पर होगा। इसके बाद चौथे हिमयुग का प्रादुर्भाव होगा।

एक हिमयुग की अवधि 10,000 वर्ष की होती है। वास्तव में पृथ्वी पर अधिकतर मानव स्थानांतरण जलवायु परिवर्तन के कारण ही हुआ है। सन् 2050 के आंशिक जलप्लावन का ज्वलंत उदाहरण न्यूयॉर्क के पास समुद्र में बनी स्टैच्यु ऑफ लिबर्टी है जो इस समय गर्दन तक समुद्र में डूब चुकी है।

उक्त आंशिक जल प्लावन से मध्य एशिया से धकेल दिए जाने पर वरुण, मान्व, और एल शाखा के आर्य-कबीले पृथ्वी पर सबसे ऊँची जगहों में से एक, पामीर के पठार की ओर स्थानांतरित हुए और धीरे-धीरे समयानुसार कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखण्ड में आकर बस गए।

ब्रह्मा, विष्णु और महेश के निवास कैलाश और बैकुंठ धाम बन गए। उत्तराखण्ड के चौखम्भा पर्वतीय क्षेत्रों में इन्द्र की इन्द्रपुरी की स्थापना हुई। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में अनेक राज्यों की स्थापना हुई। राजा लोग नदी घाटियों के साथ साथ नगर बनाते गए और नीचे मैदानों की ओर बढ़ते गए। पर्वतीय क्षेत्र से मैदान में प्रवेश करके वैदिक ऋषियों ने सबसे पहले दृश्यशती और सरस्वती के दोआब में पवित्र वैदिक अग्नि प्रज्वलित की अर्थात वैदिक ऋचाओं को क्रमबद्ध किया। इस क्षेत्र को ब्रह्मवर्त की संज्ञा दी। समयानुसार आगे आने वाले समय में उत्तर हिमालय और दक्षिण में विन्ध्याचल तक आर्य संस्कृति का विकास हुआ। जिस क्षेत्र को आर्यावर्त की संज्ञा दी गई। उक्त विवरण से स्पष्ट है कि आर्य लोग ईरान की ओर से भारत में प्रविष्ट नहीं हुए थे अपितु पामीर के पठार की ओर से होते हुए कश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों से नदी घाटियों के साथ साथ नगर बसाते हुए पंजाब व हरियाणा के मैदानी क्षेत्रों में प्रविष्ट हुए थे। यहाँ पर यह कहना भी अति आवश्यक है कि मनु के जलप्लावन की घटना आर्यों के कबिलाई काल की है, जब ये लोग पशु चारण व पशु पालन करते हुए घुमक्कड़ी जीवन व्यतीत करते थे। आर्यों ने सबसे पहले उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र में स्थायी रूप से बसना प्रारंभ किया।

प्राचार्या
सेवाधाम महिला महाविद्यालय,
रतनगढ़, बिजनौर

हिन्दी लेखिका सविता चड्ढा की चार पुस्तकों का लोकार्पण

नई दिल्ली-देश की अग्रणी साहित्यिक संस्था अखिल भारतीय सर्वभाषा संस्कृति समन्वय समिति एवं साहित्य भूमि प्रकाशन के संयुक्त तत्वावधान में लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार सविता चड्ढा की सद्य: प्रकाशित चार पुस्तकों 'मेरी प्रतिनिधि कहानियाँ, यात्रा सुख, समय समय की बात और काव्य संग्रह मैं और मेरे रिश्ते' का लोकार्पण किया गया। कार्यक्रम के प्रारम्भ में लेखिका सविता चड्ढा ने सभी का स्वागत किया और अपनी बात रखते हुए कहा मैंने लॉक डाउन के दौरान घर में रहकर भी अपनी उड़ान जारी रखी और इस समय का उपयोग करते हुए इन पुस्तकों को आपके सामने ला पाई समारोह की अध्यक्षता विख्यात हिन्दी साहित्यकार पंडित सुरेश नीरव ने की। मुख्य अतिथि, वरिष्ठ व्यंग्यकार, डॉक्टर हरीश नवल एवं कवयित्री मधु मिश्रा रहे।

कार्यक्रम का सफल एवं सरस संचालन लोकप्रिय कवयित्री डॉक्टर कल्पना पांडेय ने किया। सविता चड्ढा जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर बोलते हुए पंडित सुरेश नीरव ने सविता चड्ढा को जहाँ समकालीन साहित्य का समय सापेक्ष संवेदनाओं का बहुमुखी रचनाकार बताया वहीं डॉक्टर हरीश नवल ने कहा ''सविता चड्ढा का लेखन मानवतावादी लेखन है। वे कई विधाओं में सार्थक रचती हैं। वे उन चंद साहित्यकारों में हैं जो सामाजिक सरोकारों की केवल बात नहीं करते उन्हें चरितार्थ भी करते हैं। सविता जी की संस्था समाज कल्याण में रत रहती है और सम्मानित भी करती है। उनकी चार भिन्न विधाओं की पुस्तकों को लोकार्पित करते हुए आत्मिक गर्व की अनुभूति हो रही है। सविता जी की निष्ठा, औदार्य और विनम्रता अभिनंदनीय है। उनका लेखन सुसांस्कृतिक लेखन है

समकालीन हिन्दी ग़ज़ल में प्रतीक-विधान - डॉ. ब्रह्मजीत गौतम

'अमरकोश' में प्रतीक का अर्थ है अंगः प्रतीको अवयवः। इसके अनुसार अंग, प्रतीक और अवयव तीनों शब्द पर्यायवाची कहे जायेंगे। 'अभिधान-रत्नमाला' में पुल्लिंग शब्द 'प्रतीक' का अर्थ देते हुए कहा गया है- प्रतीयते, प्रत्येति वा इति एक देशः अंगः अवयवः। इसके अनुसार भी प्रतीक उसे कहेंगे, जो किसी का अंग या अवयव हो। अंग्रेजी में प्रतीक के लिए 'सिम्बल' (Symbol) शब्द का प्रयोग होता है। 'ऐन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका' में 'सिम्बल' का अर्थ है The term given to a visible object responding to the mind the semblance of some thing which is not shown but realized by association with it- अर्थात् 'प्रतीक' शब्द का प्रयोग उस दृश्यमान पदार्थ के लिए होता है, जो मस्तिष्क में किसी ऐसी वस्तु का सादृश्य उत्पन्न करता है, जो दिखाई तो नहीं पड़ती लेकिन साहचर्य के कारण जिसे हम समझ सकते हैं। 'प्रतीक' और उसके द्वारा संकेतित वस्तु में रूप, गुण या क्रिया का साम्य होना आवश्यक है। इसी के आधार पर वह अप्रस्तुत वस्तु के अंग या अवयव का प्रतिनिधित्व करता है।

हमारी वैखरी वाणी भौतिक होने के कारण बहुत सीमित अर्थ वाली होती है। उसमें हमारी सम्पूर्ण अनुभूति को व्यक्त करने की सामर्थ्य न पहले थी और न आज है। कवि कम शब्दों में बहुत कुछ कहना चाहता है, किन्तु अभिधामूलक शब्द उसका साथ नहीं दे पाते। अपनी अभिव्यक्ति के लिए वह अपने दैनिक जीवन के विविध क्षेत्रों या प्रकृति के प्रांगण से कोई ऐसी वस्तु चुनता है, जिसमें उसकी अनुभूति का अधिकाधिक साम्य हो तथा जो लोक में प्रचलित और परिचित भी हो। इसके माध्यम से उसकी अनुभूति दूसरों के लिए सरलता से बोधगम्य बन जाती है। एक उदाहरण द्वारा हम इसे अधिक अच्छी तरह समझ सकते हैं। 'मैं आज बहुत ख़ुश हूँ' इस वाक्य द्वारा केवल साधारण प्रसन्नता का बोध होता है। लेकिन कवि को इससे संतोष नहीं है। वह कुछ विशेष प्रकट करना चाहता है। अगर वह कहे कि 'मेरे हृदय में आज उषा मुस्करा रही है' तो इससे उसकी व्यंजकता कई गुना बढ़ जाती है। प्रसन्नता का वह सारा वातावरण सजीव हो जाता है, जो उषा-काल में होता है। 'उषा' का कोशगत अर्थ ख़ुशी या प्रसन्नता नहीं होता, किन्तु लक्षणों के आधार पर वह इस वाक्य में 'अतिशय प्रसन्नता' का बोधक बन गया है। अतः 'उषा' शब्द ख़ुशी या प्रसन्नता का प्रतीक हुआ। इसी प्रकार का आशय हमें 'आज मेरे हृदय में तूफ़ान उठा हुआ है' से लेना चाहिए, जो प्रयोक्ता के हृदय में उत्पन्न तीव्र क्रोध या उथल-पुथल का परिचायक होगा। अभिव्यक्ति की इस शैली को साहित्य में प्रतीक-योजना या प्रतीक-विधान का नाम दिया गया है।

कविता में प्रतीकों की आवश्यकता पग-पग पर अनुभव होती है, क्योंकि इनके प्रयोग से अभिव्यक्ति में व्यंजकता, प्रभविष्णुता, कलात्मकता और चित्रोपमता आ जाती है। ग़ज़ल में तो प्रतीकों के बिना काम ही नहीं चलता क्योंकि ग़ज़ल का प्रायः हर शेर अपने कोशगत अर्थ से कुछ अलग संकेत करना चाहता है

स्वामी श्यामानंद सरस्वती जब यह कहते हैं कि

ज़िन्दगी आग है न पानी है
आग-पानी की यह कहानी है

तब उनका आशय केवल भैतिक आग-पानी से नहीं होता, बल्कि आवेग-शान्ति, सुख-दुःख, दिन-रात, उजाला-अँधेरा, जीवन-मरण आदि उन द्वन्द्वों से होता है, जो जीवन में संतुलन के लिए आवश्यक हैं।

प्रारम्भ में जब तक ग़ज़ल आशिक़-माशूक़ा के बीच प्रेमिल वार्तालाप तक सीमित थी, तब उसके प्रतीकों में शराब, जाम, साक़ी, मैकश अथवा गुल, गुलशन, बुलबुल, आशियाना, बर्क़ आदि शब्दों का बोलबाला था। लेकिन जब से वह हिन्दी में आयी है और आम आदमी के जीवन के खुरदरेपन से जुड़ी है, उसके प्रतीकों में भी व्यापक बदलाव आया है। आज हमारे परिवारों में बुजुर्गों की दशा कैसी है, वे हमारे लिए कितने अप्रासंगिक हो गये हैं, इसका कलात्मक चित्रण ज़हीर क़ुरैशी ने अपने एक शेर में बहुत ही मार्मिक ढंग से किया है। हमारा घर भले ही दस कमरों वाला हो, किन्तु भगवान को किसी आले (दीवार में बनी हुई ताक़ या मोखा) में ही जगह मिलती है। यही स्थिति घर के बूढ़े भगवान की होती है

बूढ़े भगवान बैठ जाते हैं
ना-नुकर छोड़ घर के आलों में

मंगल नसीम का एक शेर देखिये, जिसमें उन्होंने 'परिन्दे' और 'उड़ान' के प्रतीकों का सहारा लेकर आम आदमी को

प्रगति की राह पर आगे बढ़ने हेतु हर समय हिम्मत और हौसला बनाये रखने के लिए प्रेरित किया है-

परिंदे! हौसला क़ायम उड़ान में रखना
हर इक निगाह तुझी पर है ध्यान में रखना

अनुभूति की भिन्नता के कारण एक ही प्रतीक अलग-अलग सन्दर्भों में प्रयुक्त किया जा सकता है। जिस 'परिंदे' का प्रयोग मंगल नसीम ने आम आदमी के लिए किया, उसी को राजेश रेड्डी ने 'युवा पीढ़ी' का प्रतीक मानकर गाँव (पुराना शजर) से शहर (नया पेड़)जाने की बात कही है-

नये पेड़ के घोंसलों में गये
परिंदे पुराना शजर बेचकर

और उसी 'परिंदे' से महेश अग्रवाल आतंकी या अवांच्छित तत्व का आशय लेते हैं तो ब्रह्मजीत गौतम उसके माध्यम से साम्प्रदायिक सद्भाव का संदेश देते हैं -

परिंदा पर नहीं अब मार पाये
हमारे पास भी पैनी नज़र हो (महेश अग्रवाल)
हाथ का मज़हब परिंदे देखते हैं कब भला
जो भी दाना दे, ख़ुशी से खा लिया और उड़ चले
(ब्रह्मजीत गौतम)

हिन्दी की ग़ज़लों में प्रतीकों का चयन अधिकांशत: प्रकृति के प्रांगण से किया गया मिलता है। एक कवि के लिए यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि उसका प्रकृति से घनिष्ट सम्बन्ध होता है और जिन वस्तुओं के सम्पर्क में हम जितना अधिक रहते हैं, आवश्यकता पड़ने पर उनमें ही अपनी अनुभूति का साम्य ढूँढते हैं। प्राकृतिक उपादानों में फूल, फल, कली, काँटा, खार, तितली, रौशनी, अँधेरा, बाग़, चमन, आँधी, पत्ता, किरण, हवा, तूफ़ान, डाली, लता, आसमान, बिजली, पछुआ, नदी, नाले, समुंदर, धूप, सूरज, साया, चाँद, तारे, बादल, वन, पर्वत, ख़ुशबू, मौसम, पेड़, पौधे, मरुस्थल, वसंत, पतझड़, कोहरा, आग, शबनम आदि न जाने कितने उपकरण हैं, जिन्हें प्रतीक रूप में अपनाकर ग़ज़लकारों ने अपनी अनुभूतियाँ लाघव के साथ अभिव्यक्त की हैं। कुछ शेर देखना उचित होगा

चढ़ते सूरज से दोस्ती क्या की
अपने साये से हाथ धो बैठे (दरवेश भारती)
आशियाँ मत बनाना तू 'शैली' अभी
आँधियों के तो फेरे बहुत हैं यहाँ (आशा शैली)
चमन को रिहाइश अगर है बनाना
हर इक शाख़ अपना समझ आशियाना (महावीर प्रसाद 'मुकेश')
नदियों-नालों में बढ़े घड़ियाल अब
एक मछली इसलिए लाचार है (दिवाकर वर्मा)
पतझड़ हो या वसंत नहीं फ़र्क कुछ मुझे
हर हाल ही में बाग़ को महका रहा हूँ मैं (मिर्ज़ा हसन 'नासिर')
रौशनी ख़ुशबू का आना मेरे घर में कम रहा
जाने क्यूँ नाराज़ मुझसे उम्र-भर मौसम रहा (किशन तिवारी)
रौंद डाला मालियों ने ही चमन
आँधियों पर तुहमतें मढ़ते रहे (ब्रह्मजीत गौतम)

प्रकृति के बाद एक कवि या शाइर का दूसरा घनिष्ट सम्बन्ध अपने आस-पास या घर-गृहस्थी की उन वस्तुओं से होता है, जो उसके दैनिक जीवन में प्राय: काम आती हैं। अपनी अनुभूतियों को शब्द देने के लिए कवि इन्हें भी प्रतीक रूप में चुन लेता है। घर, आँगन, दीवार, पत्थर, चट्टान, खेत, बागड़, घोंसला, साँप, दीपक, खिड़कियाँ, बारूद, चिराग़, कुँआ, पानी, इमारत, ईंट, गारा आदि कितनी ही ऐसी वस्तुएँ हैं, जिनका प्रयोग प्रतीक रूप में हुआ है।

मनुष्य का स्वभाव है कि वह पर्याप्त परिश्रम किये बिना ही भरपूर फल पाना चाहता है। मशहूर शाइर साज़ जबलपुरी के एक शेर में नाखून, चट्टान, कुँआ और पानी प्रतीकों के सहारे मनुष्य के इस मनोविज्ञान की बहुत ही सटीक और सार्थक अभिव्यक्ति देखिये

लोग नाख़ुन से चटानों पे बनाते हैं कुँआ
और उम्मीद ये करते हैं कि पानी निकले

'बगुला' और 'हंस' को माध्यम बनाकर आज के हालात पर कहा गया योगेन्द्र वर्मा 'व्योम' का यह शेर भी दृष्टव्य है-

मुरझा गए सुमन आशा के
बगुला हंसों पर भारी है

देश के इन्हीं हालात की चर्चा अशोक रावत तथा चंद्रभान भारद्वाज ने भी 'माली', 'चौकीदार' तथा 'फ़स्ल' और 'बागड़' के प्रतीक अपनाकर अपने-अपने अंदाज़ में की है-

माली भी शामिल होते हैं फूल चुराने वालों में
लेकिन चौकीदारों में ही खोट निकाले जाते हैं (अशोक रावत)
खेत की सारी फ़सल को बागड़ें ख़ुद चर रहीं
और हम बैठे हुए बदक़िस्मती के नाम पर (चन्द्रभान भारद्वाज)

कभी-कभी मुहावरों को भी प्रतीकों का जामा पहनाकर चमत्कारपूर्ण अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया जाता है

अब्र तू अपनी बलन्दी पर न कर इतना ग़रूर
पानी-पानी एक दिन हो जाएगा तेरा वजूद (ओमप्रकाश 'नदीम')
रहे न साँप और न टूटे लाठी
यही सियासत की दक्षता है (दरवेश भारती)

कवियों ने पौराणिक मिथकों से भी प्रतीकों का काम लिया है। राम-रावण युद्ध में लक्ष्मण के मूर्छित होने पर राम ने हनुमान से संजीवनी बूटी मँगायी। राम स्वामी थे और हनुमान उनके सेवक। किन्तु आज के समय में हर कोई स्वामी बनना चाहता है, सेवक कोई नहीं। इस प्रसंग से अंसार क़म्बरी क्या कहना चाहते हैं, उनका यह शेर दृष्टव्य है

कोई संजीवनी लाये तो कैसे
यहाँ सब राम हैं हनुमत नहीं है

ग़ज़ल के शेर बहु-आयामी अर्थ वाले होते हैं। प्रतीकों की इसी चमत्कारी माया के कारण ग़ज़ल का एक शेर अनेक सन्दर्भों में अर्थ देता है। श्री क़मरुद्दीन 'बरतर' का एक शेर देखिये-

गिर गयी इमारत क्यों जिसकी कल हुई तामीर
ईंट कैसी आयी थी गारा किसने साना था

यहाँ ईंट, गारा, इमारत आदि शब्दों के अपने प्रचलित अर्थ तो हैं ही, उनके अनेक प्रतीकार्थ भी हो सकते हैं। जैसे, जो सम्बन्ध (इमारत) अभी-अभी (कल) बना था, वह कैसे टूट गया? उसमें कैसे-कैसे लोग (ईंट) आ गये थे, जिनके कटु व्यवहार (गारा) के कारण यह सम्बन्ध टूट गया। अथवा कोई योजना या कोई संस्था अथवा पार्टी बनी। उसके सदस्य कैसे थे, जिनके बेमेल सिद्धांतों के कारण वह भंग हो गयी। श्री बरतर का एक अन्य शेर भी देखिये, जिसे कई सन्दर्भों में चरितार्थ किया जा सकता है

दो किनारों के मिलन का न ये रस्ता टूटे
बाढ़ आ जाये मगर पुल न नदी का टूटे

यहाँ दो किनारे अर्थात् दो प्रेमी, उनके मिलन का रास्ता अर्थात् उनका संकल्प, पुल अर्थात् उनका प्रेम न टूटे, भले ही बाढ़ अर्थात् अनेक बाधाएँ या रुकावटें क्यों न आयें। यही बात दो जातियों, दो देशों अथवा दो सम्प्रदायों के लिए भी कही जा सकती है। उनके जो सिद्धांत या उनके बीच जो विश्वास है, वह बना रहे। भले ही दुश्मन उसे तोड़ना चाहे, किन्तु उनका सम्बन्ध न टूटे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रतीकों में बहुत शक्ति होती है। वे हमारी निर्जीव अभिव्यक्ति को प्राणवान और चमत्कारपूर्ण बना देते हैं। ग़ज़ल को सपाटबयानी से बचाने के लिए तथा उक्ति को धारदार और असरदार बनाने के लिए प्रतीकों का अपनाया जाना बहुत आवश्यक है।

युक्ता- 206, पैरामाउण्ट सिंफनी
क्रॉसिंग रिपब्लिक,
ग़ाज़ियाबाद (उ.प्र.) 201016
मो.- 9760007838

हिन्दी ग़ज़ल में बुज़ुर्गों की स्थिति

-डॉ. भावना

आँकड़ों पर गौर करूँ तो हेल्पेज इंटरनेशनल नेटवर्क ऑफ चैरिटीज द्वारा तैयार ग्लोबल एंड वॉच इंडेक्स 2015 में 96 देशों में बुज़ुर्गों की स्थिति के मामले में भारत को 71 वां स्थान दिया गया है। सर्वेक्षण के अनुसार भारत बुज़ुर्गों के लिए सबसे खराब देश के रूप में शुमार है, वहीं स्विटजरलैण्ड को सबसे अच्छी जगह माना जाता है। ताज्जुब है कि ''मातृ देवो भव: पितृ देवो भव: से अपने जीवन का आरंभ करने वाला मनुष्य आज इतना स्वार्थी हो गया है कि उसे अपने माँ-बाप की भी चिंता नहीं रही।" वसुधैव कुटुंबकम की भावना रखने वाला यह देश आधुनिकता की अंधी दौड़ में अपने संस्कारों को भूल बैठा है। मैं, मेरी पत्नी, मेरा बच्चा.... बस इतनी-सी दुनिया है इनकी। ऐसे में पूरे देश में बुज़ुर्गों की स्थिति का दयनीय होना स्वभाविक है।

आधुनिक हिंदी ग़ज़ल प्रेमिका से गुफ्तगू की संस्कृति से काफी आगे निकल चुकी है। आज की ग़ज़ल समाज की तमाम विद्रूपताओं को अपने शेरों का विषय बनाते हुए हिन्दी कविता के सामने सीना ताने खड़ी है। इसमें कोई दो राय नहीं कि आज की हिन्दी कविता समय की तल्खियों और त्रासदियों को स्वर देते हुए काफी खुरदरी हो गई है, तो हिन्दी ग़ज़ल की कोमल ज़मीन भला अछूती कैसे रहती? उसके स्वर में भी थोड़ी-सी तल्खी आई है, जो स्वाभाविक ही कही जाएगी। कुछ लोग इस तल्खी को ग़ज़ल की ज़मीन पर हमले की तरह देखते हैं।

उन्हें पता होना चाहिए कि पूरा देश जब भ्रष्टाचार, जातिवाद, अमीरी-ग़रीबी, बच्चों, बुज़ुर्गों व विधवाओं की स्थिति पर आँसू बहा रहा हो तो भला कोई शायर प्रेमिका की आँखों में आँखें डालकर प्रेमिल शेर कैसे कहे? शायर अपनी ज़िम्मेदारी को पूरी तरह समझता है और उसे शब्द देने में कोई कोताही नहीं बरतता।

हिन्दी ग़ज़ल में बुज़ुर्गों की स्थिति जानने के लिए जब प्रसिद्ध ग़ज़लकार अनिरुद्ध सिन्हा जी के शेरों को देखती हूँ तो पाती हूँ कि वे अपने समाज में बुज़ुर्गों की स्थिति देखकर बेहद आहत हैं। उनकी लेखनी आज के हालात को कुछ इस अंदाज़ में व्यक्त करती है-

बुढ़ापे में हमें यूँ कैद कर रक्खा है बच्चों ने
हमारे घर की चौखट से हमारी चारपाई तक (अनिरूद्ध सिन्हा)

प्रसिद्ध शायर ज़हीर कुरैशी का कहना है कि बुजुर्गों का होना यानी कि मनुष्य में चिंतन का परिपक्व होना है और यही परिपक्वता हमारे देश का इंजन है, जिस पर युवा पीढ़ी सवार है। यानी कि बुजुर्गों के आशीर्वाद के बिना विकास की बातें बेमानी है। पर यह भी सच है कि देश की राजनीति की बागडोर युवा पीढ़ी के हाथों में भी आनी चाहिए ताकि देश का इंजन सरपट पटरी पर दौड़ सके। शेर देखें-

आज तक तो यही देखा है युवा पीढ़ी ने
देश को खींच रहा है कोई इंजन बूढ़ा (ज़हीर क़ुरैशी)

प्रेम किरण एक बेहतरीन शायर हैं। सरल शब्दों में गहरी बात कहना इनकी विशेषता है। उनके शेरों में बुजुर्ग किस तरह से आए हैं। ज़रा देखें-

मेरी इज़्ज़त बुजुर्गों-सी है घर में
मैं सबसे कट के तनहा हो गया हूँ (प्रेम किरण)

आजकल बुजुर्गों को साथ रखने की परंपरा ख़त्म हो गयी है। न्यूक्लियर फैमिली के इस ज़माने में संस्कारों का क्षरण हो रहा है। लोग भूलने लगे हैं कि वे भी एक दिन बूढ़े होंगे। आज की युवा पीढ़ी साधु महात्माओं के प्रति कम सहानुभूति रखती है। शेर देखें-

मुझे शक है वहाँ कोई बड़ा-बूढ़ा नहीं रहता
कि खाली हाथ उस घर से बरहमन लौट आया है
(अशोक मिज़ाज)

दिनेश प्रभात गीत और ग़ज़ल दोनों विधाओं में समानान्तर रूप से लिखने वाले ग़ज़लकारों में से एक हैं। उन्होंने बुजुर्गों के लिए कई शेर कहे। शेर देखें-

नई पीढ़ी जो अव्वल दिख रही है अंक सूची में
वही अक्सर यहाँ माँ-बाप का आदर नहीं करती (दिनेश प्रभात)

इन दिनों दो ख़बरें समाचार पत्रों एवं सोशल साइट्स पर काफी सुर्खियों में रहीं। पहला तो यह कि एक बड़े उद्योगपति अपने अरबों की संपत्ति होते हुए भी किराये के घर में रहने को विवश हैं। वहीं दूसरी ख़बर यह थी कि विदेश में रह रहे बेटे ने अपनी माँ की महीनों खोज-ख़बर नहीं ली। पड़ोसियों ने दरवाजा तोड़ा तो भीतर उसका कंकाल मिला। भारतीय मूल्यों का यह विघटन आत्मा को घायल कर रहा है। शेर देखें-

हासिल न हो सका बड़े-बूढ़ों को सुख कभी
चाहे सपूत उनके कमाते रहे बहुत (दरवेश भारती)

लैपटॉप और मोबाइल में खोई रहने वाली पीढ़ियाँ समझ ही नहीं पातीं कि बुजुर्ग हमारे लिए दरख़्त के समान हैं, जिसकी छाया के बगैर हमारे व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास संभव नहीं।

आज का दौर बेहद जटिलताओं से भरा हुआ है। आदमी ने खूब सारे पैसे कमा लिये, संसाधन जुटा डाले, बीमारियों से बचने के लिए मेडिकल इंश्योरेंस तक करवा लिया पर बीमारी पर दवा के साथ-साथ दुआओं की भी ज़रूरत होती है, यह भूल गया।

भूल मत हस्ती बुजुर्गों की दुआ
काम आती है दवा इक हद तक (हस्तीमल हस्ती)

आज की पाठशालाओं में नैतिक शिक्षा का सर्वथा अभाव है। सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों को 'मिड डे मील' जैसी सरकारी योजनाओं से फुर्सत नहीं, वहीं प्राइवेट स्कूल के बच्चे अलग-अलग सांस्कृतिक कार्यक्रमों एवं ग्रेड को बेहतर बनाने में जुटे रहते हैं। अभिभावक को बच्चों के अच्छे ग्रेड चाहिए तो वहीं विद्यालय सबसे अच्छा परीक्षा परिणाम देकर अभिभावक को लुभाने में कोई कसर छोड़ना नहीं चाहता। नैतिक मूल्यों की भला किसे पड़ी है! अब शिक्षा भी व्यवसाय हो गया है, जिसका उद्देश्य अधिक से अधिक धन अर्जित करना है। शेर देखें-

होने लगी शालाओं में ये कैसी पढ़ाई
अब बच्चे बुजुर्गों की भी इज़्ज़त नहीं करते (हस्तीमल हस्ती)

बुढ़ापा अपने आप में रोगों का केंद्र है। हाई ब्लड प्रेशर, शुगर और थायराइड जैसी गंभीर बीमारियों का सामना 40 के बाद अमूमन सभी लोगों को करना पड़ता है। अनेक प्रकार के दर्द कमज़ोर होते शरीर के लिए असहनीय हैं। एक दर्द कम होता है तो दूसरा घेर लेता है। दर्द से घिरा तथा परिवार के हाशिए पर बैठा बुजुर्ग आख़िर करे भी तो क्या? शेर देखें-

जिस्म का घाव हो गया बूढ़ा
दर्द की ऐनकें बदलता है (ज्ञान प्रकाश विवेक)

डी. एम. मिश्र की ग़ज़लें हमेशा जन-सरोकारों के प्रति प्रतिबद्ध दिखती हैं। वे बुजुर्गों की शारीरिक क्षमता कम होने पर असहाय होते देख परेशान हो जाते हैं। जिन बच्चों को हम अपने हाथों से सुग्गा कौर, खरगोश कौर कहकर निवाले खिलाते हैं, वही बड़े होते ही हमारी अनदेखी करते हैं। शेर देखें-

बहुत बहला के, फुसला के जिसे रोटी खिलाता था
उसी बेटे से रोटी आज हमको माँगनी पड़ती (डी. एम. मिश्र)

युवा होते ही स्त्री पुरुष की शादी कर दी जाती है, जिसका मुख्य उद्देश्य संतान प्राप्ति है। स्त्री-पुरुष माँ-बाप बनते ही

अपनी नींद, अपने चैन खोकर उन्हें पालते-पोसते, शिक्षा-दीक्षा देते कब बुजुर्ग हो जाते हैं, पता ही नहीं चलता। पता चलता है तब जब उनके बच्चे उनके साथ अभद्र व्यवहार करते हैं। जिनको उंगली पकड़कर चलना सिखाया, वही बुढ़ापे में उनकी उंगली थामने की बजाय अंगूठा दिखाते हैं। शेर देखें-

हजारों दुख सहे हैं उम्र-भर औलाद की ख़ातिर
बुढ़ापे में वो बच्चों की रुखाई सह नहीं पाती (वशिष्ठ अनूप)

घर के ड्राइंग रूम में अपने आगन्तुकों से खुलकर मिलने वाला कब बालकनी की टूटी कुर्सी पर आसीन हो जाता है, पता ही नहीं चलता। कई बार देखा जाता है जिसने कंधों पर बस्ते रख स्कूल की सीढ़ियाँ चढ़वायी, उसने ही उसे सीढ़ियों से उतार फेंका। चार पैसे क्या कमा लिए अपने पिता को अपने दोस्तों से मिलवाने में भी शर्म महसूस होने लगी। अपने तुतलाते, हकलाते बेटों को शान से पड़ोसियों से परिचय कराते कभी पिता शर्मिंदा नहीं हुए। शेर देखें-

ओसारे में किसी कोने सजा कर
मुझे रक्खा है घर ने हाशिये पर (देवेंद्र आर्य)

बेटों की अपेक्षा बेटियाँ आजकल बुजुर्गों की देखभाल ज़्यादा कर रही हैं। यह परिवर्तन निःसंदेह सुकून दायक है। बुढ़ापे में अगर पिता अपने बेटे से मदद की उम्मीद करते हैं, तो क्या बुरा है? यह उनका अधिकार है। बच्चों का यह कर्तव्य है कि वे अपने बुजुर्गों का भली-भांति ख़याल रखें। उनके साथ थोड़ा समय बिताएँ। उन्हें हाशिये पर नहीं रखें बल्कि अपने जीवन में शामिल करें। आज के युवा ग़ज़लकारों ने भी बुजुर्गों की स्थिति पर खूब शेर कहे हैं। शेर देखें-

सहारा दे भी दो अब बेटे मेरे
बुढ़ापे की मेरी टूटी कमर है (विकास)

कहते हैं कि जितनी दवा काम नहीं करती, उतनी संवेदना काम कर जाती है। स्पर्श चिकित्सा बूढ़े शरीर में जान डाल देने के लिए काफी है। बुजुर्गों के पाँव के पास थोड़ी देर बैठकर उनसे उनके ज़माने की बात करना, सुनना ख़ुद को इतिहास से जोड़ना भी है। पहले के समय में नई दुल्हन को रात में खाने के बाद एक घंटे अपनी सास के पाँव दबाने की परिपाटी थी, जिससे सभी महिलाओं को गुज़रना होता था। आज के स्त्री विमर्श से इतर बिना किसी शोरगुल से यह विमर्श सबसे उपयोगी विमर्श था। जिस तरह की बातें सास और बहू के बीच होती थीं, वही उसके नए घर के सदस्यों को जानने का ज़रिया था। सासू माँ की कहानियों में ही घर की रस्में, तहज़ीब व अनुशासन की शिक्षा होती थी। यही कड़ी टूट गयी है, जिसकी वजह से परिवार में बिखराव शुरू हो गया है।

बुजुर्गों को सुनो, समझो, उन्हें अच्छी तरह रक्खो
ये तुमसे कितनी उम्मीदें लगाकर जी रहे होंगे (के. पी. अनमोल)

आधुनिकता के दौर में न केवल बुजुर्ग बल्कि बच्चे भी अकेले हो गए हैं। ''नानी तेरी मोरनी को मोर ले गये'' जैसे प्यारे गीतों के साथ इठलाते बच्चे क्रेच में आयाओं के भरोसे पल रहे हैं। दादी की कहानी कहाँ गुम हो गयी, किसी को नहीं मालूम। अब एक क्लिक में हिलते-डुलते हाथ कार्टून कैरेक्टर के साथ हाज़िर हो जाते हैं और बच्चे उन्हीं के साथ लगाव महसूस करते हैं।

अलग करने की इनको भूलकर सोचो न तुम बेटे
कि दादी और पोती को मुहब्बत की ज़रूरत है (डॉ. भावना)

आपने ऐसे कई घरों को ज़रूर देखा होगा, जो महज़ मुट्ठी भर अन्न के लिए अपने माता-पिता को तरसा देते हैं। दो समय के भोजन के लिए दो बेटों में बँटवारा हो जाता है। एक सुबह खिलाता है तो दूसरा शाम। संत-महात्माओं की इस धरती पर बुजुर्गों की यह हालत सोचनीय है। शेर देखें-

एक मुट्ठी अन्न की ख़ातिर है अब वो जी रहा
नौजवां बेटों को जो अपनी जवानी दे गया (राहुल शिवाय)

इन सबके बावजूद हम बुजुर्गों की स्थिति से परेशान ज़रूर हैं, पर हताश और निराश नहीं। आज भी कई ऐसे युवा हैं, जो न केवल अपने माँ-बाप का पूरी तरह ख़याल रखते हैं बल्कि उनके साथ अपना भरपूर समय बिताते हैं। उन्हें अपने घर की तहज़ीब और संस्कार के रूप में देखते हैं तथा उनकी लाठी बनना अपनी शान समझते हैं। हाँ! यह श्रवण कुमार की धरती है, जो अपने बड़े- बूढ़े को कंधे पर रखकर तीर्थाटन कराने का माद्दा रखता है। इन श्रवण कुमारों की संख्या कम ज़रूर हो गई है पर शून्य नहीं हुई।

डूबती उम्मीद को फिर रोशनाई दे रहा है
वो पिता के हाथ में पहली कमाई दे रहा है (अशोक अंजुम)

स्पष्ट है कि शायरों ने न केवल बुजुर्गों की दयनीय स्थिति को केंद्र में रखकर शायरी की है बल्कि उनके समाधान भी सुझाये हैं। वरिष्ठ एवं युवा ग़ज़लकारों के शेरों से गुज़रते हुए यह कहा जा सकता है कि आज का दौर ख़राब ज़रूर है, पर इतना भी ख़राब नहीं कि उम्मीद ही ख़त्म हो गयी हो।

आद्या हास्पिटल,
सीतामढ़ी रोड,
ज़ीरोमाइल, मुज़फ्फरपुर
(बिहार)- 842004

हिन्दी काव्य में ग़ज़ल –ज़हीर कुरेशी

'हिन्दी काव्य में ग़ज़ल' सबसे पहले तो 'ग़ज़ल' है- जिसने उर्दू ग़ज़ल की काव्य-परंपरा को आत्मसात करते हुए अपना विकास किया है। समकालीन हिन्दी ग़ज़ल ने उर्दू ग़ज़ल के रास्ते पर चलकर ही पाँच दशक लम्बी यात्रा पूरी की है। वह भी वज़्न और बह्र को मानती है और अरेबिक अर्कानों का पालन करने वाले इल्मे-अरूज़ को स्वीकार करते हुए हिन्दी की प्रकृति, पहचान और शब्द-शक्ति से हिन्दी साहित्य के अनुभव-कोष को विस्तार दे रही है। हिन्दी ग़ज़ल भी 'तग़ज़्ज़ुल' को स्वीकार करती है और शेर कहते हुए अभीष्ट साँकेतिकता की अधिकतम रक्षा करना चाहती है।

हिन्दी ग़ज़ल के पास अपनी विराट शब्द-संपदा है, मिथक हैं, मुहावरे हैं, बिम्ब हैं, प्रतीक हैं, रदीफ़ हैं, क़ाफ़िये हैं। इस प्रकार, समकालीन हिन्दी ग़ज़ल पारंपरिक ग़ज़ल की छायावादी शैली से मुक्त होने का प्रयास भी है तथा शिल्प और विषय का उत्तरोत्तर विकास भी हमें इसमें परिलक्षित होता है। इस प्रक्रिया एवं विकास की पृष्ठभूमि में समकालीन जीवन की जटिल परिस्थितियाँ भी महत्वपूर्ण हैं। ये सारी परिस्थितियाँ केवल देश और भाषा से ही जुड़ी हुई नहीं हैं, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर घटित हो रहे नए राजनैतिक, सामाजिक, साँस्कृतिक, आर्थिक एवं सूचना-तकनीकी परिवर्तन भी इसकी पृष्ठभूमि में हैं। इसलिए यह कहा जा सकता है कि हिन्दी ग़ज़ल का उद्‌भव अकस्मात नहीं हुआ। इसका अपना रूपायन आज की गतिशील संघर्ष प्रक्रिया का ही परिणाम है।

ग़ज़ल वर्णिक छंद है, जिसकी व्याकरणीय शुद्धता जाँचने की कसौटी उसकी (अरेबिक) बहर है। सोने को सोना सिद्ध होने के लिए कसौटी की जाँच-परख से गुज़रना ही पड़ता है। उसी तरह, हिन्दी ग़ज़ल भी उर्दू ग़ज़ल की शैली में अरेबिक बहरों को मानती है और अपनी परख के लिए 'बहर' की छन्दानुशासी 'तक़्तीअ' के लिए तैयार है।

हिन्दी के कुछ नए अरूज़ियों (छंद-शास्त्रियों) ने 'रुक्न' और 'बहरों' के हिन्दी नामकरण की चेष्टाएँ की हैं। मैं उनके इस अतिशय प्रयत्न से सहमत नहीं हूँ। उसके लिए मेरे पास एक ही तर्क है। फ़ारसी ग़ज़ल ने अरेबिक अर्कान को स्वीकार किया, उर्दू ग़ज़ल ने भी अरेबिक अर्कान का अनुगमन किया, फिर हिन्दी ग़ज़ल का ग़ज़ल के सर्व स्वीकार्य मानकों से हटने का क्या औचित्य है? नए मानक स्वीकृत होने तक, हिन्दी ग़ज़ल को जिन अंतर्द्वंद्वों से गुज़रना पड़ेगा, उससे बेहतर है कि वह अरेबिक बहर स्वीकार कर, अपने को केवल मन, वचन, कर्म से हिन्दी की ग़ज़ल सिद्ध करे। यह हिन्दी ग़ज़ल के लिए अधिक उदार, समावेशी और सरल रास्ता है।

हम सभी जानते हैं कि आरंभिक तौर पर नई विधाओं के साथ हमेशा संशय बने रहते हैं। पचास वर्ष आयु की हिन्दी ग़ज़ल के साथ भी हैं। लेकिन, आधी सदी की इस कालावधि में भाषाई स्तर पर मध्य-मार्गी हिन्दी ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल के चरित्र और मिज़ाज को समझा है। अनेक आत्म-संघर्षों एवं विमर्शों से गुज़रने के बाद, हिन्दी में ग़ज़ल कहने वाले अधिकाँश ग़ज़लकारों ने भाषाई स्तर पर एक बीच का रास्ता चुन लिया है। आज मध्य-मार्गी हिन्दी ग़ज़लकार ही हिन्दी ग़ज़ल की काव्य-परंपरा को आगे बढ़ाने वाले गतिमान ग़ज़लगो माने जा सकते हैं।

रदीफ़, क़ाफ़िया, मतला, बहर, तक़्तीअ आदि मूल-भूत सिद्धाँतों को मानते हुए भी, हिन्दी का समकालीन ग़ज़लकार उर्दू ग़ज़ल की निम्नाँकित बातों को नहीं मानता:-

1- उर्दू के केवल उन प्रचलित शब्दों को ही समकालीन हिन्दी ग़ज़ल में मान्य किया जाता है, जो सचमुच आज की जन-भाषा में लोकप्रिय हैं। उदाहरण के लिए सियासत, ज़ुबान, मज़ा, रौनक, इन्किलाब, परचम, पैग़ाम आदि जैसे जन-प्रवाह में घुले-मिले शब्दों को तो हिन्दी ग़ज़ल के शेरों में उपयोग कर लिया जाता है। लेकिन, साकित, गर्क़ाब, फ़ुसूँगर, तकल्लुम, बरहम, सम, तलातुम आदि शब्दकोश में देखकर समझने योग्य उर्दू शब्दों को हिन्दी ग़ज़लकार अपनी शायरी में उपयोग में नहीं लाते।

2- उर्दू में तराकीब (विभक्ति-कौशल) से बनाए गए शब्दों (जैसे:- लज़्ज़ते-अहसासे-उल्फ़त, जुस्तजू-ए-खुद, चश्मे-नम, करारो-लुत्फ़ आदि) को समकालीन हिन्दी ग़ज़ल शेरों में अस्वीकार करती है।

3- 'राज़' का क़ाफ़िया 'आज' से और 'आगाज़' का सानुप्रास 'ताज' से मिलाने वाले ग़ज़लकारों को हिन्दी ग़ज़ल में हतोत्साहित किया जाता है।

4- समकालीन हिन्दी ग़ज़ल में (2+1) पदभार के अनेक (यथा:- शह्र, जम्अ, दख़्ल, रह्म, सह्ल, सुब्ह, सुल्ह, शम्अ, फ़स्ल, नक्द, वह्म, वज्ह आदि) शब्दों को (1+2) के पदभार (यथा:- शहर, जमा, दखल, रहम, सहल, सुबह, सुलह, शमा,

फसल, नकद, वहम, वजह) में उपयोग किया जा रहा है। क्योंकि हिन्दी आलेख, कहानी, छंद-मुक्त, मुक्त-छंद कविता, गीत, दोहे में उपरोक्त जन-प्रवाह में लोकप्रिय उर्दू शब्द (1+2) के पदभार में ही प्रयोग किए जाते हैं।

5-इसी प्रकार पियाला, परवा, ज़ियादह, खँडर, मुआमला, मुआफ़, मसअला, मशअल, तजरुबा, किल्आ जैसे लोकप्रिय उर्दू शब्द हिन्दी ग़ज़ल में प्याला, परवाह, ज़्यादा, खंडहर, मामला, माफ़, मसला, मशाल, तजुर्बा, किला शब्दों के रूप में उपयोग किए जा रहे हैं।

समकालीन हिन्दी ग़ज़ल की इसी व्याख्या के क्रम में, यह बताना भी आवश्यक प्रतीत होता है कि रदीफ़ क़ाफ़िया, मतला, बहर, तक़्तीअ आदि मूल-भूत सिद्धाँतों को मानने वाली हिन्दी ग़ज़ल आज उर्दू ग़ज़ल की और कौन-कौन सी बातों का अनुसरण कर रही है:-

1- प्रायः देखा गया है कि उर्दू ग़ज़ल में 'अलिफ', 'ये' आदि के क़ाफ़िये स्वीकार्य हैं- जिनके कारण शेरों में सानुप्रास सरल हो जाते हैं। हिन्दी ग़ज़ल भी अपने शेरों में बड़े आ, बड़ी ई, बड़ा ऊ, ए, ओ वर्णों की मात्राओं के क़ाफ़िये (उर्दू ग़ज़ल की शैली में ही) उपयोग कर रही है।

2-उर्दू ग़ज़ल में मिसरे या शेर की आवश्यकतानुसार मेरा, तेरा, कोई, और, वो आदि शब्दों को मिरा, तिरा, कुई, उर, वु पढ़ा जा सकता है। तक़्तीअ करते हुए, उपरोक्त शब्दों की मात्रा दबाकर पढ़ने की स्थिति में ही गणना की जाती है। हिन्दी ग़ज़ल भी इस सुविधा का पूरा-पूरा लाभ उठा रही है।

इसी प्रकार, नियमानुसार का, की, के, से, को, लो, दोनों, जाएगी, रहे, किया, ऐसा, देखो, है, हैं, पी, सकते, सकता, उठना, जागना, आपकी रखी, था, थी, हूँ आदि शब्दों की अंतिम (दीर्घ) मात्राएँ गिराई जा सकती हैं। अर्थात् दीर्घ होते हुए भी, अंतिम वर्णों को कई बार उर्दू ग़ज़ल में लघु गिना जाता है। समकालीन हिन्दी ग़ज़ल ने उर्दू की इस सुविधा को स्वीकार कर लिया है और शायरी में नियमानुसार इसका उपयोग कर रही है।

3-उर्दू ग़ज़ल में वस्ल के नियम से शायरी को बहुत लाभ हुआ है। वस्ल के नियम के अंतर्गत शेर में अगर दो शब्द एक-दूसरे के निकट हैं। पहले शब्द का अंत (लघु) व्यंजन वर्ण के रूप में हो रहा है। दूसरे निकट के शब्द का आरंभ (दीर्घ) स्वर वर्ण के रूप में हो रहा है, तो व्यंजन और स्वर को वस्ल (संयुक्त) किया जा सकता है। जैसेः- मिसरा है-

(अ) बहुत थक गया हूँ, कुछ आराम दे दो

वस्ल करने के बाद, मिसरे को यूँ पढ़ा जाएगा-

बहुत थक गया हूँ, कुछाराम दे दो

(ब) मिसरा है-

अगर और जीते रहते, यही इन्तिज़ार होता

वस्ल करने के बाद, मिसरे को कुछ यूँ पढ़ा जाएगा-

अगरौर जीते रहते, यही इन्तिज़ार होता

उल्लेखनीय है कि समकालीन हिन्दी ग़ज़ल ने वस्ल (संयुक्त करने) की इस सुविधा को पूरी तरह स्वीकार कर लिया है और अपने शेरों में नियमानुसार इसका उपयोग भी कर रही है।

(4) उर्दू ग़ज़ल में, आवश्यकतानुसार मिसरे के अंतिम शब्द के सर्वांतिम लघु वर्ण को (तक़्तीअ के समय) लोप करने की सुविधा है। जैसेः- मिसरा है-

दूर तक फैली हुई तन्हाइयों में तेरी याद

(तक़्तीअ करते समय) मिसरा यूँ पढ़ा जाएगा-

दूर तक फैली हुई तन्हाइयों में तेरी या

आवश्यकतानुसार मिसरे के अंतिम शब्द के अंतिम लघु वर्ण को लोप करने की सुविधा का लाभ समकालीन हिन्दी ग़ज़ल भी उठा रही है।

पाँच दशक लम्बी यात्रा के बाद, समकालीन हिन्दी ग़ज़लकारों के आत्म-विश्वास में काफी वृद्धि हुई है। देवनागरी में, लब्ध-प्रतिष्ठ प्रकाशनों से इल्मे-अरूज़ (ग़ज़ल के छन्द शास्त्र) की आधिकारिक पुस्तकों के बाज़ार में आने के बाद, हिन्दी के नए ग़ज़लकार भी वज़्न, बहर, तक़्तीअ जैसे ग़ज़ल के मूल-भूत सिद्धान्तों से 'लैस' दिखाई दे रहे हैं। हिन्दी के ग़ज़लकारों के पास समकालीनता की बेहतर समझ तो है ही। फलस्वरूप आज की हिन्दी ग़ज़ल मुख्य-धारा की कविता होने के मार्ग पर पूरे विश्वास के साथ आगे बढ़ रही है।

108, त्रिलोचन टावर,
संगम सिनेमा के सामने,
गुरुबक्श की तलैया,
पो.ऑ. जीपीओ, भोपाल (म.प्र.)- 462001

लेखन का उद्देश्य सदैव जीवन का परिष्कार करना होता है: –हरेराम समीप

(वरिष्ठ ग़ज़लकार एवं आलोचक हरेराम समीप से के. पी. अनमोल की बातचीत)

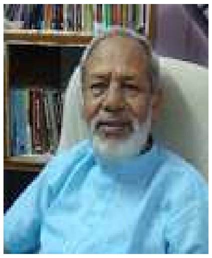

के. पी. अनमोल- ग़ज़ल आपके लिए क्या है? आप उसकी क्या प्रमुख विशेषताएँ मानते हैं?

हरेराम समीप- ग़ज़ल के बुनियादी ढांचागत शिल्प की चर्चा को यदि छोड़ दूँ तो ग़ज़ल मेरे लिए फ़िक्र और फ़न की एक संवाद-धर्मी गेय विधा है। फ़िक्र अर्थात संवेदना दिल से निसृत होती है और किसी अन्य के दिल तक पहुँचाने के उद्देश्य से ग़ज़ल के शेर के द्वारा संप्रेषित की जाती है। शर्त यही है, अगर यह फ़िक्र वहाँ तक पहुँच गयी तो शेर सफल वरना फुस्स। वहीं फ़न अर्थात् शिल्प इस संप्रेषण की नयी-नयी तरकीब निर्धारित करने का सौष्ठव प्रयत्न है। यह प्रयत्न ग़ज़लकार की ग़ज़ल के प्रति गहरी निष्ठा, लगन, समर्पण और साधना से सफल होता है। आशय यही है कि ग़ज़ल की प्रमुख विशेषताओं में उसकी ग़ज़लियत या शेरीयत सबसे अहम है और इसकी कसौटी शेर का प्रभावी होना ही है। इसीलिये माना जाता है कि एक अच्छी ग़ज़ल के शेरों में सूक्ष्म सांकेतिकता हो, संवाद क्षमता हो, अनुभूति की तीव्रता हो, लयात्मकता हो, भावों की सशक्त संप्रेषणीयता हो, विषय की व्यापकता हो और जैसा पहले कहा गया है कि ज़बर्दस्त ग़ज़लियत हो। मैंने इन्हीं विलक्षण खूबियों के कारण ग़ज़ल को अपनाया है।

के.पी. अनमोल-आधुनिक ग़ज़ल का मिज़ाज कैसा है?

हरेराम समीप-आधुनिक ग़ज़ल उर्दू की परम्परागत इश्किया शायरी से बाहर निकल कर आसन्न सामाजिक व सांस्कृतिक विषयों को अभिव्यक्त कर रही है। उसकी प्रतिबद्धता वर्तमान मनुष्य की बदहाली, विसंगति और विद्रूपता को उजागर करने में है। इसके लिए आधुनिक ग़ज़ल ने अपनी नयी भाषा गढ़ी है, जिसमें उसने व्यंग्य के प्रतिरोधी तेवर को प्रभावी माध्यम बनाया है, नये बिम्ब और नए प्रतीकों का प्रयोग शुरू किया है ताकि वह व्यापक जनसामान्य की भावनाओं को बेहतर ढंग से प्रतिलबबित कर सके।

के.पी. अनमोल-आधुनिक ग़ज़ल की इस नयी भाषा के बारे में ज़रा विस्तार से बताएँ?

हरेराम समीप- हम जानते हैं कि ग़ज़ल में भाषा की अहम भूमिका होती है। साथ ही यह भी कि ग़ज़ल को भाषा का सहज रूप ही रास आता है। भाषा की यही सहजता उसकी सम्प्रेषणीयता का मूल आधार भी बनती है। ग़ज़लकार जानता है कि उसके पाठक या श्रोता को कौनसी भाषा रास आयेगी, जिससे उसकी ग़ज़ल के शेर उसके ज़ेहन में सहजता से उतर जाएँगे। आज के ग़ज़लकार को यह भी पता है कि उसे आम आदमी के जीवन का चित्रण करना है, इसलिए वह उसी आम आदमी की आम फ़हम भाषा में ग़ज़ल कहता है, जिसे वह खुद भी ओढ़ता-बिछाता है। अतः आधुनिक ग़ज़ल की नयी भाषा जनसामान्य की यही हिन्दुस्तानी भाषा है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी देखें तो हम पाते हैं कि भारत में वली दकनी से लेकर आधुनिक शायरों तक की परम्परा से सम्पन्न यह ग़ज़ल कथ्य और भाषा के स्तर पर उत्तरोत्तर जनसामान्य के क़रीब ही आयी है।

के. पी. अनमोल-आपकी नज़रों में आधुनिक ग़ज़ल का भविष्य क्या है?

हरेराम समीप-किसी विधा का भविष्य उसकी जीवन के प्रति दृष्टि और समय के साथ उसकी गतिमयता या प्रासंगिकता ही निर्धारित करती है। ग़ज़ल के लगभग सात-आठ सौ सालों के इतिहास से साफ़ पता चलता है कि ग़ज़ल को अपने समय के साथ चलना आता है। प्रेम या रूमान से चलकर अध्यात्म, दर्शन, फिर नीति, फिर देशभक्ति या राष्ट्रीय चेतना, फिर सामाजिक सौहार्द्र, विसंगत वर्तमान और पतनशील मानवीय मूल्य जैसे विषयों की मुखर अभिव्यक्ति करते हुए ग़ज़ल ने अपने विकास की असीम संभावना के प्रति हमें आश्वस्त कर दिया है। एक और बात है कि आज ग़ज़ल जनसंवाद की विधा के रूप में भाषाओं की सरहदें पार कर अनेक क्षेत्रीय भाषाओं में लोकप्रिय हो रही है, तब हम निस्संदेह कह सकते हैं कि ग़ज़ल का भविष्य उज्ज्वल और सुदृढ़ है।

के.पी. अनमोल-आपका मानना है कि आप एक प्रतिबद्ध लेखक हैं। लेखन एक सार्थक उद्देश्य के साथ हो। ऐसा क्यों?

हरेराम समीप-लेखन का उद्देश्य सदैव जीवन का परिष्कार करना होता है। जीवन, चाहे वह वैयक्तिक हो या सामाजिक, लेखक को उससे गहरे स्तर तक जुड़ना ही होता है, तभी वह जीवन-यथार्थ की अभिव्यक्ति पूरी ईमानदारी से कर पाता है।

मैंने कभी शौकिया या समय बिताने या सिर्फ वाहवाही लूटने के ध्येय से कुछ नहीं लिखा। मुझे लगता है कि मेरी गजलें, दोहे, कविताएँ या कहानियाँ अपने समय की बेचैनियों से ही उपजे हैं। मैंने इतना प्रयास अवश्य किया है कि इनमें जीवन का ताप मौजूद रहे और इनसे पाठक का जीवनबोध विकसित होता रहे, यही मेरे लेखन का अभीष्ट भी रहा है।

के.पी. अनमोल-आपकी हर एक रचना में उसका समय बोलता है। साहित्य में उसका समय और परिस्थितियों का मौजूद होना कितना ज़रूरी है?

हरेराम समीप-मुंशी प्रेमचंद ने 'साहित्य समाज का दर्पण' ठीक ही कहा है। दर्पण में हम जब तक होते हैं तभी तक दिखाई देते हैं। ऐसा कभी नहीं होता कि आप वहाँ से चले जाएँ फिर भी वहाँ आपकी तस्वीर आती रहे या आप पिछले किसी की तस्वीर पर टिप्पणी कर पायें। दरअस्ल साहित्यकार जिस समय में जीता है, जो देखता है, जो भोगता है और जिन समकालीन विसंगतियों से प्रतिवाद करता है, उसे चित्रित करना चाहता है। दरअस्ल ये मेरे प्रश्नाकुल मन के उत्तर खोजते दोहे और शेर हैं, जो आपके समक्ष आये हैं।

के. पी. अनमोल-आपका हिन्दी ग़ज़ल की आलोचना के बारे में क्या कहना है। आपने भी तो इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण काम किया है?

हरेराम समीप-नहीं भाई! 'समकालीन ग़ज़लकारः एक अध्ययन' पुस्तक शृंखला हिन्दी ग़ज़ल की आलोचना पर काम नहीं है, बल्कि हिन्दी ग़ज़ल की पिछले चालीस वर्षो की विकास यात्रा को एक नए अंदाज़ में प्रस्तुत करने की एक कोशिश भर है। इस पुस्तक शृंखला में मैंने एक-एक ग़ज़लकार के व्यक्तित्व और कृतित्व का प्रस्तुतिकरण आलेखों के रूप में किया है।

लोग यह कह रहे हैं कि हिन्दी ग़ज़ल की आलोचना पर काम नहीं हो रहा है। मेरा मानना यह है कि अभी तो हिन्दी ग़ज़ल ही उस आलोचक के पास तक नहीं पहुँची है, जिससे उसे आलोचना की अपेक्षा है। वह आलोचक और कोई नहीं वह आम जन है। अतः हिन्दी ग़ज़ल की आलोचना आमजन के बीच से ही निकलेगी, बाकी सभी समीक्षात्मक प्रयास या तो स्वयं ग़ज़लकारों के आत्मात्मलोचन के रूप में आ रहे हैं या प्रायोजित आलोचना के रूप में पारस्परिक आदान-प्रदान की तरह हैं। ऐसी प्रायोजित आलोचनाएँ, समीक्षाएँ, लेख आदि रचना का विज्ञापन तो कर सकते हैं, उसकी मार्केटिंग भी कर सकते हैं लेकिन उसे आलोकित नहीं कर सकते। आलोकित तो केवल आलोचना ही कर सकती है। मेरा आग्रह है कि समाज के बीच स्वयं रचना को ही अपनी आलोचना की ज़मीन तैयार करनी चाहिए।

के. पी. अनमोल-पिछले कुछ वर्षों में युवा ग़ज़लकारों ने तेज़ी से ध्यान खींचा है। वे कथ्य और विषय-वस्तु दोनों में विस्तार कर रहे हैं। कितना सन्तुष्ट हैं आप इनसे।

हरेराम समीप-दुष्यंत के बाद निश्चित रूप से हिन्दी ग़ज़ल ने अनेक सीमान्त पार किये हैं। शिल्प, कथ्य और उसके मिज़ाज के स्तर पर उसमें नवीनता स्पष्ट दिखाई दे रही है। इसमें कुछ युवा ग़ज़लकारों ने सबका ध्यान खींचा है, जिनमें के. पी. अनमोल, प्रताप सोमवंशी, वीरेन्द्र खरे, डॉ. भावना आदि प्रमुख हैं। उनमें अनेक स्तर पर नवीनता देखी जा सकती है। वे उन जनवादी मूल्यों से जुड़े भी हैं, जो ग़ज़ल के नये अंदाज़, नए तेवर और न भाषा हिन्दी ग़ज़ल की विकास यात्रा को आगे बढ़ाने में सहायक हैं।

बस चिंता अब भी वही है कि आज फैशन की तरह अनेक ग़ज़लकार धड़ाधड़ ग़ज़लें पेल रहे हैं और शार्टकट मार कर प्रसिद्धि प्राप्त करने की होड़ में लगे हैं, जिससे बड़े भ्रम की स्थिति है कि किसे ठीक माना जाए, किसे नहीं। दरअस्ल, सृजन का मूल्यांकन उसके परिमाण से नहीं हो सकता कि आपने कितनी सौ ग़ज़लें लिखी हैं या कितने ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हुए हैं अपितु उनकी गुणवत्ता से होता है कि उनमें जनता को उद्वेलित करने वाली ग़ज़लें कितनी हैं? मसलन दुष्यंत ने पचासेक ग़ज़लें ही लिखी हैं और वे आज भी शिखर पर हैं, वहीं दूसरे हैं जिनके दसों ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं परन्तु उनकी एक ग़ज़ल तक जनता की कंठहार न बन पायी।

अतः ज़रूरी है कि नए ग़ज़लकार कुछ सार्थक करने के लिए ग़ज़ल की अपनी परम्परा की निर्मम व्याख्या करें, अपने समय से निर्भीक साक्षात्कार करें और फिर अपनी ग़ज़लों से अपने भविष्य की नई प्रस्तावना गढ़ें। इसके लिए उन्हें स्पष्ट काव्यदृष्टि के साथ स्पष्ट जीवन-दृष्टि भी रखनी होगी। मुझे लगता है, इन ग़ज़लकारों को अपनी परम्परा के गहन अध्ययन की आवश्कता है। उम्मीद है कि अध्ययन और अभ्यास से ही ग़ज़ल में परिपक्वता आयेगी तथा शब्द सामर्थ्य में वृद्धि होगी। मेरा विचार है कि नयी पीढ़ी को ग़ज़ल को लेकर एक केन्द्रीय पत्रिका की शुरुआत भी करना चाहिए, जिसके माध्यम से समग्र ग़ज़ल पर एक सार्थक विमर्श का वातावरण निर्मित किया जा सके। मुझे विश्वास है कि इससे हिन्दी ग़ज़ल के नए क्षितिज तलाशने में हमे अवश्य मदद मिलेगी। मैं हिन्दी ग़ज़ल के नए भविष्य का आह्वान करता हूँ।

ग़ज़ल का सामाजिक सरोकार - डॉ. काकोली गोराई

हिन्दी साहित्य में ग़ज़ल को सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त है। यह हिन्दी साहित्य की एक सशक्त और अत्यन्त लोकप्रिय काव्य विधा है। आज हिन्दी साहित्य की बहुआयामी काव्य धाराओं में गीत, नवगीत, ग़ज़ल, दोहा, क्षणिका, हाइकू आदि धाराएँ बहुत पठित एवं बहुचर्चित हो रही हैं। इन सभी विधाओं में ग़ज़ल ही एक ऐसी विधा है, जिसने जनमानस को अत्यधिक प्रभावित किया है।

ग़ज़ल अरबी शब्द है। ग़ज़ल शब्द 'गिजाल' से बना है। ग़ज़ल अरबी साहित्य की प्रमुख विधा है, जो अरबी, फ़ारसी, ईरानी से होते हुए उर्दू में फिर हिन्दी तक पहुँची है। सही अर्थों में माना जाए तो ग़ज़ल अरबी ज़ुबान का शब्द है, जिसका अर्थ औरतों के बारे में बातें करना या औरतों की बातें करना है। ग़ज़ल उर्दू शायरी का महत्वपूर्ण काव्य रूप है। गूढ़ तथा सूक्ष्म विषय को कम से कम शब्दों में काव्यात्मकता तथा शिल्पगत शर्तों को पूरा करती हुई रचना को ग़ज़ल कहा जा सकता है। ग़ज़ल विधा के पक्ष में यह दलील भी दी जाती है कि वह मानव संवेदनाओं एवं चेतना को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इतना ही नहीं, ग़ज़ल एक ऐसी विधा है, जिसमें विषयगत विविधता और व्यापकता की संभावना हमेशा बनी रहती है तथा तत्वज्ञान, मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मताएँ, आध्यात्मिकता जैसे तत्व भी ग़ज़ल के विषय हो सकते हैं। आम जीवन से इसका जुड़ाव इस विधा की विशिष्ट उपलब्धि है।

ग़ज़ल की प्रकृति को भौतिकवाद की कसौटी पर कसा या परखा नहीं जा सकता। संवेदनात्मक और तर्कबुद्धिपरक के परस्पर निकट लाने का प्रयास तो किया जा सकता है। यही कारण है कि ग़ज़ल का आलोचना पक्ष वैचारिक कारकों से विभाजित है। ग़ज़ल के अपने दर्शन और यथार्थ सम्प्रेषण की अपनी कलात्मक विशेषताएँ हैं। फ़िराक गोरखपुरी ग़ज़ल के विषय में लिखते हैं, ''ग़ज़ल के शेरों का विषय सीमित नहीं होता। फिर भी उसमें मुख्यता करुणा, प्रेम और समर्पण के ही भाव प्रदर्शित किए जाते हैं। ग़ज़ल में चूंकि एक ही शेर में पूरी बात कह देनी होती है, इसलिए प्रतीकात्मकता का बहुत सहारा लिया जाता है। गौरतलब है कि एक-एक शब्द, विभिन्न परिस्थितियों में असंख्य वस्तुओं का प्रतीक हो सकता है, इसलिए एक ही शेर, प्रतीक रूप में आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और व्यावहारिक जीवन में एक-सा लागू हो सकता है। इसी आधार पर दार्शनिक तथ्यों को कविता के साथ सामने लाने में ग़ज़ल की परंपरा-सी बन गयी है।" फ़िराक गोरखपुरी ने जिस ग़ज़ल के प्रति अपनी बेबाक राय प्रस्तुत की है, वह दौर ग़ज़ल का था। फ़िराक गोरखपुरी ने 'उर्दू कविता' पुस्तक में ग़ज़ल पर विस्तार से लिखा है- ''ग़ज़ल के अच्छे शेर व्यापक होते हैं। उनकी पहुँच बहुत दूर तक होती है। ग़ज़ल का हर शेर अपनी दुनिया आप बनाता है। उसमें ऐसा जादू होता है कि जीवन की अनेक परिस्थितियों का अनेक प्रयोगों में, अनेक अवसरों पर, अनेक पारस्परिक संबंधों और व्यवहारों पर लागू होता है।"

अनेक विद्वानों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से ग़ज़ल को परिभाषित किया है। हिन्दी ग़ज़ल को परिभाषित करते हुए डॉ. कुँअर बेचैन लिखते हैं, ''ग़ज़ल रेगिस्तान के प्यासे होंठों पर उतरती हुई शीतल तरंग की उमंग है। ग़ज़ल घने अंधकार में टहलती हुई चिंगारी है। ग़ज़ल नींद से पहले का सपना है। ग़ज़ल जागरण के बाद का उल्लास है। ग़ज़ल गुलाबी पाँखुरी के मंच पर बैठी हुई ख़ुशबू का मौन स्पर्श है।" गोपाल दास नीरज के अनुसार, ''ग़ज़ल न तो प्रकृति की कविता है न अध्यात्म की, वह हमारे उसी जीवन की कविता है, जिसे हम सचमुच जीते हैं।" माजदा असद जी के अनुसार, ''साहित्य और समाज में ग़ज़ल का वही स्थान है, जो किसी भरे-पूरे घर में एक अलबेली सुन्दरी का होता है। उसके चाहने वालों में बड़े-बूढ़े, औरत-मर्द, सूफ़ी, योग्य और अयोग्य, ज्ञानी और अज्ञानी सभी होते हैं। कुछ उसके अल्हड़पन के दिलदार हैं तो कुछ उसकी शोखियों पर मरते हैं, कुछ उसकी गंभीरता, धीरता और रख-रखाव पर आसक्त हैं तो कुछ उसके हाव-भाव और चाल-चोंचले पर नाक-भौं चढ़ाते हैं।"

ग़ज़ल अरबी शब्द है। ग़ज़ल शब्द 'ग़िज़ाल' से बना है। ग़ज़ल अरबी साहित्य की प्रमुख विधा है, जो अरबी, फ़ारसी, ईरानी से होते हुए उर्दू में फिर हिन्दी तक पहुँची है। सही अर्थों में माना जाए तो ग़ज़ल अरबी ज़ुबान का शब्द है, जिसका अर्थ औरतों के बारे में बातें करना या औरतों की बातें करना है। ग़ज़ल उर्दू शायरी का महत्वपूर्ण काव्य रूप है। गूढ़ तथा सूक्ष्म विषय को कम से कम शब्दों में काव्यात्मकता तथा शिल्पगत शर्तों को पूरा करती हुई रचना को ग़ज़ल कहा जा सकता है। ग़ज़ल विधा के पक्ष में यह दलील भी दी जाती है कि वह मानव संवेदनाओं एवं चेतना को जागृत करने में

महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इतना ही नहीं, ग़ज़ल एक ऐसी विधा है, जिसमें विषयगत विविधता और व्यापकता की संभावना हमेशा बनी रहती है तथा तत्वज्ञान, मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मताएँ, आध्यात्मिकता जैसे तत्व भी ग़ज़ल के विषय हो सकते हैं। आम जीवन से इसका जुड़ाव इस विधा की विशिष्ट उपलब्धि है।

ग़ज़ल की प्रकृति को भौतिकवाद की कसौटी पर कसा या परखा नहीं जा सकता। संवेदनात्मक और तर्कबुद्धिपरक के परस्पर निकट लाने का प्रयास तो किया जा सकता है। यही कारण है कि ग़ज़ल का आलोचना पक्ष वैचारिक कारकों से विभाजित है। ग़ज़ल के अपने दर्शन और यथार्थ सम्प्रेषण की अपनी कलात्मक विशेषताएँ हैं। फ़िराक गोरखपुरी ग़ज़ल के विषय में लिखते हैं, 'ग़ज़ल के शेरों का विषय सीमित नहीं होता। फिर भी उसमें मुख्यता करुणा, प्रेम और समर्पण के ही भाव प्रर्दशित किए जाते हैं। ग़ज़ल में चूंकि एक ही शेर में पूरी बात कह देनी होती है, इसलिए प्रतीकात्मकता का बहुत सहारा लिया जाता है। गौरतलब है कि एक-एक शब्द, विभिन्न परिस्थितियों में असंख्य वस्तुओं का प्रतीक हो सकता है, इसलिए एक ही शेर, प्रतीक रूप में आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और व्यावहारिक जीवन में एक-सा लागू हो सकता है। इसी आधार पर दार्शनिक तथ्यों को कविता के साथ सामने लाने में ग़ज़ल की परंपरा-सी बन गयी है।' फ़िराक गोरखपुरी ने जिस ग़ज़ल के प्रति अपनी बेबाक राय प्रस्तुत की है, वह दौर ग़ज़ल का था। फ़िराक गोरखपुरी ने 'उर्दू कविता' पुस्तक में ग़ज़ल पर विस्तार से लिखा है- ''ग़ज़ल के अच्छे शेर व्यापक होते हैं। उनकी पहुँच बहुत दूर तक होती है। ग़ज़ल का हर शेर अपनी दुनिया आप बनाता है। उसमें ऐसा जादू होता है कि जीवन की अनेक परिस्थितियों का अनेक प्रयोगों में, अनेक अवसरों पर, अनेक पारस्परिक संबंधों और व्यवहारों पर लागू होता है।"

अनेक विद्वानों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से ग़ज़ल को परिभाषित किया है। हिन्दी ग़ज़ल को परिभाषित करते हुए डॉ. कुँअर बेचैन लिखते हैं, ''ग़ज़ल रेगिस्तान के प्यासे होंठों पर उतरती हुई शीतल तरंग की उमंग है। ग़ज़ल घने अंधकार में टहलती हुई चिंगारी है। ग़ज़ल नींद से पहले का सपना है। ग़ज़ल जागरण के बाद का उल्लास है। ग़ज़ल गुलाबी पाँखुरी के मंच पर बैठी हुई ख़ुशबू का मौन स्पर्श है।" गोपाल दास नीरज के अनुसार, ''ग़ज़ल न तो प्रकृति की कविता है न अध्यात्म की, वह हमारे उसी जीवन की कविता है, जिसे हम सचमुच जीते हैं।" माजदा असद जी के अनुसार, ''साहित्य और समाज में ग़ज़ल का वही स्थान है, जो किसी भरे-पूरे घर में एक अलबेली सुन्दरी का होता है। उसके चाहने वालों में बड़े-बूढ़े, औरत-मर्द, सूफ़ी, योग्य और अयोग्य, ज्ञानी और अज्ञानी सभी होते हैं। कुछ उसके अल्हड़पन के दिलदार हैं तो कुछ उसकी शोखियों पर मरते हैं, कुछ उसकी गंभीरता, धीरता और रख-रखाव पर आसक्त हैं तो कुछ उसके हाव-भाव और चाल-चोंचले पर नाक-भौं चढ़ाते हैं।"

कुल मिलाकर ग़ज़ल एक सुसंस्कृत और सुसभ्य विधा है। विद्वानों, आलोचकों और शायरों ने अपने-अपने लेखकीय अनुभव कम-से-कम शब्दों में अधिक-से-अधिक प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किये हैं। हिन्दी साहित्य में ग़ज़ल की परंपरा का प्रारम्भ, आदिकाल के प्रख्यात कवि अमीर खुसरो से माना जाता है। अमीर खुसरो की रचनाओं में पहेलियाँ, मुकरियाँ, ग़ज़ल आदि प्रमुख हैं। हिन्दी ग़ज़लों के विकास में अमीर खुसरो की विशेष भूमिका रही है। खुसरों के बाद ग़ज़ल कबीर के यहाँ मिलती है।

आधुनिक युग में भारतेन्दु, निराला, प्रसाद, हरिऔध ने ग़ज़लें लिखीं। साठ के दशक से ग़ज़ल में बदलाव आया और वो समाज से जुड़ने लगी। इसी समय ग़ज़ल के क्षेत्र में दुष्यंत कुमार (1933-1975) का आगमन होता है, जिससे ग़ज़ल के क्षेत्र में बदलाव आता है। दुष्यन्त कुमार समकालीन हिन्दी कविता के एक ऐसे हस्ताक्षर हैं, जिन्होंने कविता, गीति नाट्य, उपन्यास आदि सभी विधाओं पर लिखा है। उनकी ग़ज़लों ने हिन्दी ग़ज़ल को नया आयाम दिया। उनकी हर ग़ज़ल आम आदमी की ग़ज़ल बन गयी है, जिसमें चित्रित है- आम आदमी का संघर्ष, जीवनादर्श, राजनैतिक विडम्बनाएँ और विसंगतियाँ। दुष्यंत कुमार की पीड़ा उनकी ग़ज़लों में है-

वो सलीबों के क़रीब आए तो हमको
कायदे-कानून समझाने लगे हैं
अब नयी तहजीब़ के पेशे-नज़र हम
आदमी को भूनकर खाने लगे हैं

इस प्रकार की यथार्थ ग़ज़लों से दुष्यंत कुमार ने आम जनता का दिल जीत लिया। एक आम आदमी की ज़ुबान बनकर दुष्यन्त ने जिस पीड़ा को कलमबद्ध किया, वह कोई आसान काम नहीं था। उनकी ग़ज़लें पढ़कर ऐसा लगता है कि वो हिन्दी से कहीं ज़्यादा हिन्दुस्तान की ग़ज़लें हैं। देश और समाज की हर समस्या पर उनकी निगाह थी। उनका सारा संघर्ष उनकी शायरी में प्रतिबिंबित हुआ है-

कहीं पे धूप की चादर बिछा के बैठ गये

कहीं पे शाम सिराहने लगा के बैठ गये

दुष्यन्त कुमार हिन्दी कवियों में एक ऐसा नाम है, जिसे हिन्दी ग़ज़ल का प्रवर्तक माना जाता है। उनके बाद हिन्दी ग़ज़ल को नई ऊँचाइयाँ प्रदान करने में शमशेर बहादुर सिंह, अदम गोंडवी, कुंवर बेचैन, त्रिलोचन, निदा फ़ाजली, सूर्य भानु गुप्त, बाल स्वरूप राही, माधव कौशिक, जानकी बल्लभ शास्त्री, डॉ. महेन्द्र अग्रवाल, नीरज, रामकुमार कृषक, आलोक श्रीवास्तव आदि प्रमुख हस्ताक्षर हैं। इन ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल को समझने और उसे पाठकों के मध्य रोचक बनाने का प्रमुख कार्य किया है, ग़ज़ल की दशा और दिशा बदलने में अपूर्व योगदान दिया है। हिन्दी ग़ज़लों को नवीनता और दृष्टि प्रदान करते हुए डॉ. महेन्द्र अग्रवाल शेर कहते हैं-

हुई उर्दू की मैं, क़ानून अरबी
मुझे ज़िन्दा रखेगी सिर्फ हिन्दी

आधुनिक हिन्दी ग़ज़लें मनोरंजन या भोग-विलास का साधन नहीं है, यह आमजन की आत्माभिव्यक्ति का सहज साधन है। वर्तमान समय में वैश्वीकरण, बाज़ारवाद और उपभोगवाद के कारण समाज संकुचित हो गया है। कम्प्यूटर और इंटरनेट ने मानव की बाह्य गतिविधियों पर प्रतिबंध लगा दिया है। दोस्ती, रिश्ते-नाते जिस प्रकार प्यार व अपनापन खोते जा रहे हैं, वह पीड़ादायक स्थिति है। इस चिन्ताजनक स्थिति में ग़ज़लकारों की ग़ज़लों ने सदैव अपनी दृष्टि के दायरे में लिया है-

मैं महकती हुई मिट्टी हूँ किसी आँगन की
मुझको दीवीर बनाने पे तुली है दुनिया। (कुंवर बेचैन)
चाँद को छू के चले आए हैं विज्ञान के पंख
देखना ये है कि इंसानियत कहाँ तक पहुँची (नीरज)

हिन्दी ग़ज़ल न सिर्फ लचीली है, बल्कि इसमें समय के सापेक्ष नवीनता, प्रयोगवादी और प्रगतिवादी होने की प्रेरणा भी है। आज ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल की परम्परा को न केवल आगे बढ़ाया, बल्कि ग़ज़लों द्वारा युगीन यथार्थ का बोध भी करया।

साहित्य, सामाजिक सरोकारों का ही प्रतिफल है। 'सामाजिक' का अर्थ- समाज से जुड़ा होना है। 'सरोकार' का अर्थ- प्रयोजन, वास्ता, पहलु, संदर्भ, आयाम, सम्बन्ध तथा परिणाम आदि से है। प्रत्येक साहित्यकार समाज का एक अंग है। समाज की परिस्थितियों के साथ उसका भावात्मक सरोकार होता है। साहित्यकार समाज के प्रति जितना अधिक संवेदनशील होता है, उसका सामाजिक सरोकार उतना ही गहरा होता है। समाज और साहित्य का मौलिक सम्बन्ध है। साहित्य जब-जब सामाजिक संदर्भों से जुड़ता है, समाज के सरोकारों का सच्चा विश्लेषण करता है, वह जनमानस के लिए प्रेरणादायी बनता है। सामाजिक सरोकार का महत्त्व इसलिए भी बढ़ जाता है, क्योंकि सामाजिक संदर्भ से किसी वस्तु का आकलन किया जाता है।

हिन्दी ग़ज़ल को सामाजिक सरोकारों से जोड़ने के क्रान्तिकारी कार्य का सूत्रपात सम्भवतः दुष्यन्त कुमार ने ही किया। दुष्यन्त कुमार के बाद तो जैसे हिन्दी ग़ज़ल को एक नई दिशा मिल गयी। आजकल हिन्दी ग़ज़ल के क्षेत्र में तो बड़ी भीड़ है। इन ग़ज़लकारों में शायद ही कोई ऐसा ग़ज़लकार होगा, जिसने अपनी ग़ज़ल में सामाजिक सरोकारों को अभिव्यक्त न किया हो।

दरअसल हिन्दी ग़ज़ल का चेहरा सामाजिक सरोकारों से ही बनता है। इन सरोकारों में घर-परिवार, रिश्ते-नाते, शोषण, ग़रीबी ही नहीं, त्रासद-विसंगतियाँ, राजनीतिक छल, आतंक और पर्यावरण पर आसन्न संकट जैसे कितने ही मुद्दे शामिल दिखाई देते हैं। जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र शायद ही बचा हो, जहाँ हिन्दी ग़ज़लकारों की दृष्टि न गयी हो। हिन्दी ग़ज़ल ने अपने सामाजिक सरोकारों की प्रतिबद्धता के चलते ही समाज के साथ संवाद की स्थिति को निरंतर सुदृढ़ किया है, वह समाज की पीड़ा और उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम बनी है। हिन्दी ग़ज़ल समय के साथ चलने वाली विधा है और इसीलिए सामाजिक सरोकारों का अनुभव कराती है।

ग़ज़ल के शब्द-भाव, माधुर्य, सरसता, कल्पनाशीलता जीवन के कठिन व मधुर दोनों पक्षों को सतरंगी प्रकाश से आन्दोलित करता रहता है। लोक जगत में ग़ज़ल को प्रारम्भ से आज तक प्रमुखता, अनिवार्यता से स्वीकारा जाता रहा है।

सहायक प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग, जामताड़ा कॉलेज,
जामताड़ा (झारखण्ड) 815351
kakoligorai@gmail-com
9417132797

दुष्यन्त कुमार

ये रौशनी है हक़ीक़त में एक छल, लोगो
कि जैसे जल में झलकता हुआ महल, लोगो
दरख़्त हैं तो परिन्दे नज़र नहीं आते
जो मुस्तहक़ हैं वही हक़ से बेदख़ल, लोगो
वो घर में मेज़ पे कोहनी टिकाये बैठी है
थमी हुई है वहीं उम्र आजकल, लोगो
दिखे जो पाँव के ताज़ा निशान सहरा में
तो याद आए हैं तालाब के कँवल, लोगो
वे कह रहे हैं ग़ज़लगो नहीं रहे शायर
मैं सुन रहा हूँ हर इक सिम्त से ग़ज़ल, लोगो

राजगोपाल सिंह

आजकल हम लोग बच्चों की तरह लड़ने लगे
चाबियों वाले खिलौनों की तरह लड़ने लगे
ठूँठ की तरह अकारण ज़िंदगी जीते रहे
जब चली आँधी तो पत्तों की तरह लड़ने लगे
कौनसा सत्संग सुनकर आये थे बस्ती के लोग
लौटते ही दो क़बीलों की तरह लड़ने लगे
हम फ़कत शतरंज की चालें हैं उनके वास्ते
दी ज़रा-सी शह तो मोहरों की तरह लड़ने लगे
इससे तो बेहतर था कि हम जाहिल ही रह जाते, मगर
पढ़ गये, पढ़कर दरिंदों की तरह लड़ने लगे

डॉ. उर्मिलेश

तू इन बूढ़े दरख्तों की हवाएँ साथ रख लेना
सफ़र में काम आएँगी दुआएँ साथ रख लेना
हँसी बच्चों की, माँ का प्यार और मुस्कान बीबी की
तू घर से जब चले तो ये दवाएँ साथ रख लेना
सफ़र कितना भी मुश्किल हो वो फिर मुश्किल नहीं होगा
तू थोड़े हौसले बस दायें-बायें साथ रख लेना
बिछुड़ता देखकर तुझको जो घिरकर भी नहीं बरसीं
तू उन कजरारी आँखों की घटाएँ साथ रख लेना
ख़ताएँ दूसरों की जब कभी तू ढूढ़ने निकले
तू सबसे पेशकर अपनी ख़ताएँ साथ रख लेना

रामदरश मिश्र

देख ली दुनिया तुम्हारी मेहरबानी देख ली
तुमने दी थी ओ ख़ुदा वो ज़िंदगानी देख ली
फूल-से बचपन के सिर देखा बुढ़ापे का पहाड़
आँसुओं की आँच में गलती जवानी देख ली
चीख़ती लपटें अचानक सामने उठने लगीं
जब किसी घर में कोई लड़की सियानी देख ली
माँ ने बचपन में सुनाया जिसको लोरी की तरह
अब हक़ीक़त में वो जंगल की कहानी देख ली
एक नन्हा ख़्वाब मेरा खो गया जाने कहाँ
गाँव देखा, शहर देखा, राजधानी देख ली

अदम गोंडवी

ग़ज़ल को ले चलो अब गाँव के दिलकश नज़ारों में
मुसलसल फ़न का दम घुटता है इन अदबी इदारों में
न इनमें वो कशिश होगी, न बू होगी, न रानाई
खिलेंगे फूल बेशक लॉन की लम्बी कतारों में
अदीबो! ठोस धरती की सतह पर लौट भी आओ
मुलम्मे के सिवा क्या है फ़लक़ के चाँद-तारों में
रहे मुफ़लिस गुज़रते बे-यक़ीनी के तजरबे से
बदल देंगे ये इन महलों की रंगीनी मज़ारों में
कहीं पर भुखमरी की धूप तीखी हो गयी शायद
जो है संगीन के साये की चर्चा इश्तहारों में

गोपालदास 'नीरज'

हम तेरी चाह में ऐ यार! वहाँ तक पहुँचे
होश ये भी न जहाँ है कि कहाँ तक पहुँचे
इतना मालूम है, ख़ामोश है सारी महफ़िल
पर न मालूम ये ख़ामोशी कहाँ तक पहुँचे
वो न ज्ञानी, न वो ध्यानी, न बिरहमन, न वो शेख
वो कोई और थे जो तेरे मकां तक पहुँचे
एक इस आस पे अब तक है मेरी बन्द जुबां
कल को शायद मेरी आवाज़ वहाँ तक पहुँचे
चाँद को छू के चले आए हैं विज्ञान के पंख
देखना ये है कि इंसान कहाँ तक पहुँचे

विनय मिश्र

रास्ता मिलता नहीं बेचैनियों के बीच
मैं खड़ा हूँ गालियों और गोलियों के बीच
उसको पढ़ने की यहाँ ज़हमत उठाए कौन
जो लिखा है ज़िन्दगी की अर्ज़ियों के बीच
कट चुके पेड़ों की चीखें सुन रहा हूँ मैं
शाम होते लौटते इन पंछियों के बीच
है इधर भीगा हुआ मौसम तो मन की आग
उठ रही है इक धुएँ-सी सिसकियों के बीच
चंद आँसू, चंद सपने और उठती चीख
मैं अभी फुटपाथ पर हूँ गाड़ियों के बीच

अलवर (राजस्थान)

ज़हीर क़ुरैशी

दादी के क़िस्से सुनने-सुनाने के दिन गये
परियों के साथ नींद में जाने के दिन गये
गुस्से के घूँट पीके भी हँसते रहे पिता
गुस्से को व्यक्त करके दिखाने के दिन गये
प्रतिभा के साथ-साथ प्रबंधन भी चाहिए
प्रतिभा से अपने लक्ष्य को पाने के दिन गये
यदि बच गयी है जान तो मत खोलिए ज़ुबान
अपराधियों को दण्ड दिलाने के दिन गये
मस्ती की पाठशाला भी सीमित है देह तक
मित्रों के साथ जश्न मनाने के दिन गये

भोपाल (मध्यप्रदेश)

चन्द्रसेन विराट

तुम कभी थे सूर्य लेकिन अब दियों तक आ गये
थे कभी मुख्पृष्ठ पर अब हाशियों तक आ गये
वक़्त का पहिया किसे कुचले कहाँ कब क्या पता
थे कभी रथवान अब बैसाखियों तक आ गये
देश के संदर्भ में तुम बोल लेते ख़ूब हो
बात ध्वज की थी चलाई कुर्सियों तक आ गये
प्रेम के आख्यान में तुम आत्मा से थे चले
घूम फिर कर देह की गोलाइयों तक आ गये
सभ्यता के पंथ पर यह आदमी की यात्रा
देवताओं से शुरू की वहशियों तक आ गये

इंदौर (म. प्र.)

हरेराम समीप

झुलसती धूप, थकते पाँव, मीलों तक नहीं पानी
बताओ तो कहाँ धोऊँ सफ़र की ये परेशानी
इधर भागूँ, उधर भागूँ, जहाँ जाऊँ, वहीं पाऊँ
परेशानी, परेशानी, परेशानी, परेशानी
बड़ा सुंदर-सा मेला है मगर उलझन मेरी यह है
नज़र में है किसी खोए हुए बच्चे की हैरानी
यहाँ मेरी लड़ाई सिर्फ़ इतनी रह गयी यारो
गले के बस ज़रा नीचे रुका है बाढ़ का पानी
समय के ज़ंग-खाए पेंच दाँतों से नहीं खुलते
समझ भी लो मेरे यारो बग़ावत के नए मानी

फ़रीदाबाद (हरियाणा)

बालस्वरूप राही

अक्ल ये कहती है सयानों से बनाए रखना
दिल ये कहता है दीवानों से बनाए रखना
जाने किस मोड़ पे मिट जाएँ निशां मंज़िल के
राह के ठौर-ठिकानों से बनाए रखना
हादसे हौसले तोड़ेंगे सही है फिर भी
चंद जीने के बहानों से बनाए रखना
दिन को दिन, रात को जो रात नहीं कहते हैं
फ़ासले उनके बयानों से बनाए रखना
एक बाज़ार है दुनिया ये अगर 'राही जी'
तुम भी दो-चार दुकानों से बनाए रखना

तिमारपुर (दिल्ली)

ज्ञानप्रकाश विवेक

तेरी मर्ज़ी है जहाँ चाहे बहा दे पानी
पर ज़रा-सा तू परिंदों का बचा दे पानी
उससे कहना कि वो रोये तो संभलकर रोये
कहीं ऐसा न हो आँखों का गँवा दे पानी
वो जो फिरता है कोई टूटी सुराही लेकर
मैं उसे कैसे कहूँ मुझको पिला दे पानी
सब मेरे दोस्त पुराने यूँ मिले हैं मुझसे
जैसे पानी में कोई शख़्स मिला दे पानी
मछलियाँ मैंने समुन्दर की चुराई यारो
कौन जाने कि मुझे कैसी सज़ा दे पानी

बहादुरगढ़ (हरियाणा)

दरवेश भारती

आदमी ज़िन्दा रहे किस आस पर
छा रहा हो जब तमस विश्वास पर
वेदनाएँ दस्तकें देने लगें
इतना मत इतराइए उल्लास पर
जो हो ख़ुद फैला रहा घर-घर इसे
पाएगा क़ाबू वो क्या संत्रास पर
सत्य का पंछी भरेगा क्या उड़ान
पहरुआ हो झूठ जब आवास पर
दुख को भारी पड़ते देखा है कभी
आपने 'दरवेश' हास-उपहास पर

नांगलोई (नई दिल्ली)

विज्ञान व्रत

वो तब तक दरिया न हुआ
मैं जब तक सहरा न हुआ
ख़ुद से भी मिलना न हुआ
लेकिन मैं तनहा न हुआ
वो जब तक मेरा न हुआ
मैं ख़ुद भी अपना न हुआ
दुनिया में क्या-क्या न हुआ
मैं उसकी दुनिया न हुआ
मैं अब तक ख़ुद-सा न हुआ
ये होना, होना न हुआ

नोएडा (उ.प्र.)

डॉ. ब्रह्मजीत गौतम

गगन में चाँद-तारे देख हर रोज़
ये क़ुदरत के नज़ारे देख हर रोज़
घुसा हर एक कमरे में है बाज़ार
खिलौने न्यारे-न्यारे देख हर रोज़
कहाँ हैं अब कदम्बों के हरे पेड़
ये यमुना के किनारे देख हर रोज़
है जिनके पास फुटपाथों की जागीर
वो भारत के दुलारे देख हर रोज़
ग़रीबी क्या है, गर हो देखना 'जीत'
तो फाँकों के गुज़ारे देख हर रोज़

गाज़ियाबाद (उत्तरप्रदेश)

हस्तीमल हस्ती

इस तरह याद आएँगे हम फ़ुरसतों के दरमियाँ
ज्यूँ खनक जाए हैं कुछ ख़ामोशियों के दरमियाँ
क़ैद-सा महसूस करता है दिलों का राज़ भी
खुल नहीं जाता है जब तक दूसरों के दरमियाँ
दूरियाँ नज़दीकियाँ ऐसी ही हम दोनों में है
जैसी होती है अमूमन दो घरों के दरमियाँ
इक अलग ही तर्ज़ के होते हैं शोहरत के शिखर
सीढ़ियाँ रहती हैं ग़ायब सीढ़ियों के दरमियाँ
हर मुसाफ़िर की नज़र ऐसी कहाँ जो देख ले
फ़ासले कुछ और भी हैं फ़ासलों के दरमियाँ

मुंबई (महाराष्ट्र)

महेश अग्रवाल

शराफ़त, सभ्यता, इंसानियत, ईमान की ख़्वाहिश
कहाँ पूरी हुई अब तक किसी इंसान की ख़्वाहिश
ये ख़्वाहिश है नदी की तोड़ दूँ चट्टान का सीना
नदी के वेग को रोकूँ ये है चट्टान की ख़्वाहिश
प्रचारित कर दिया जाता उसे पत्थर पे लिखवा कर
तुम्हारा दान तुम तक ही रहे यह दान की ख़्वाहिश
बिना मंथन किए कुछ लोग अमृत का कलश चाहें
नहीं करता कोई संघर्ष के विषपान की ख़्वाहिश
न हों अब नफ़रतें दिल में, न ख़ंजर पर लहू चमके
मुहब्बत ही मुहब्बत हो ये हिंदुस्तान की ख़्वाहिश

भोपाल (मध्यप्रदेश)

अशोक मिज़ाज

वो आँगन याद आता है वो तुलसी याद आती है
जहाँ खेले थे बचपन में वो मिट्टी याद आती है
कभी शहनाई बजती थी तो उसकी याद आती थी
और अब शहनाई बजती है तो बेटी याद आती है
वो अपना घर हो या होटल हो या ढाबा हो रस्ते का
कहीं रोटी महकती है तो माँ की याद आती है
पिता ने किस तरह घर के मसाइल हल किये होंगे
मैं इस पर ग़ौर करता हूँ तो नानी याद आती है
किसी को भूलना मेरे लिए मुमकिन नहीं शायद
मैं जब फ़ुरसत में होता हूँ तो सबकी याद आती है

सागर (मध्यप्रदेश)

अनिरुद्ध सिन्हा

वहाँ गिरधर न पैगंबर न शिव शंकर मिलेंगे
सियासत की वो मंडी है वहाँ विषधर मिलेंगे
वो ऐसी एक मंडी है कहीं आटा न चावल
उम्मीदों और वादों के वहाँ तेवर मिलेंगे
हमारे शहर की तस्वीर आकर देखिएगा
सड़क के बीच में गड्ढे नए अक्सर मिलेंगे
भले फ़सलें वफ़ा की सूख जाती है यहाँ पर
घृणा के लहराते खेत सब उर्वर मिलेंगे
खड़ी कर दी गयी दीवार मज़हब की घरों में
हम अपने चाहने वालों से भी छुपकर मिलेंगे

मुंगेर (बिहार)

कमलेश भट्ट 'कमल'

जहाँ दुख देर से बैठा हुआ है
ये मन अब भी वहीं ठिठका हुआ है
ज़रा-सा हाल ही पूछा था उससे
वो बोला-दिल बहुत हल्का हुआ है
हँसाओगे तो फिर से रो पड़ेगा
वो जैसे-तैसे बस सँभला हुआ है
वहाँ कम पड़ गयी हैं क़ब्रगाहें
सुना है जबसे, दिल बैठा हुआ है
ये जज़्बे का समय है और जज़्बा
हर एक इंसान में बिखरा हुआ है

गौतमबुद्ध नगर, (उ.प्र.)

किशन स्वरूप

नहीं मालूम वो क्या बोलता है
मगर आँखों से गूँगा बोलता है
जिसे पहचानता भी था न को
उसी का आज ओहदा बोलता है
दिखा देगा वो सच को झूठ करके
सलीक़े से वो मीठा बोलता है
टिकी है वक़्त की उस पर इमारत
बड़ी शिद्दत से लम्हा बोलता है
'स्वरूप' अब आइने से क्या मुरव्वत
समय के नक़्श चेहरा बोलता है

मेरठ (उत्तरप्रदेश)

अशोक अंजुम

कौन सीरत पे ध्यान देता है
आईना जब बयान देता है
मेरा किरदार इस ज़माने में
बारहा इम्तिहान देता है
पंख अपनी ज़गह पे वाजिब है
हौसला भी उड़ान देता है
जितने मगरूर हुए जाते हैं
मौला उतनी ढलान देता है
तेरे बदले में किस तरह ले लूँ
वो तो सारा जहान देता है

अलीगढ़ (उत्तरप्रदेश)

सूर्यभानु गुप्त

क़ैद इतने बरस रहा है ख़ून
छूटने को तरस रहा है ख़ून
गाँव में एक भी नहीं ओझा
और लोगों को डस रहा है ख़ून
सौ दुखों का सितार हर चेहरा
तार पर तार कस रहा है ख़ून
छतरियाँ तान लें जो पानी हो
आसमां से बरस रहा है ख़ून
प्यास से मर रही है ये दुनिया
और पीने को बस, रहा है ख़ून

नाथूखेड़ (बिंदकी), जिला फतेहपुर (उ.प्र.)

धर्मेन्द्र गुप्त 'साहिल'

कैसे-कैसे ख़याल आते हैं
ज़ेहन में सौ सवाल आते हैं
आग लग जाती है ज़माने में
सत्य में जब उबाल आते हैं
देखने वाला ही नहीं कोई
हमको भी कुछ कमाल आते हैं
एक का क्या जवाब हमने दिया
हर तरफ़ से सवाल आते हैं
बच ही जाती हैं मछलियाँ कुछ तो
जब भी पानी में जाल आते हैं

बनारस (उत्तरप्रदेश)

देवेन्द्र आर्य

मुफ़लिसों की शान में गाएगा धन
ख़र्च होने दो, तभी आएगा धन
कोई मज़हब है न कोई ज़ात है
जिस किसी का खाएगा, गाएगा धन
धन से धन जुड़के तो धन होता ही है
ऋण से ऋण जुड़के भी बरसाएगा धन
आप बस ईमान भरकर भेज दें
बांड खुद खाते में चढ़वाएगा धन
सोचिए बिनाई का क्या होगा जब
आँख में पानी-सा भर जाएगा धन

गोरखपुर (उत्तरप्रदेश)

विवेक भटनागर

किस तरह की भूख का मंज़र नज़र आने लगा
चाँद रोटी की जगह बर्गर नज़र आने लगा
दोस्तो! इन बाग़बानों से ये पूछो तो सही
ये गुलिस्तां आज क्यूँ बंजर नज़र आने लगा
अब तो हर अखबार, चैनल, हर गली, हर मोड़ पर
इक मदारी और इक बंदर नज़र आने लगा
लूट लेना जिसकी फ़ितरत है, वही बाज़ार अब
दोस्त बनकर घर के ही अंदर नज़र आने लगा
जिनके क़त्लेआम पर सबकी ज़ुबां ख़ामोश थी
उनको मेरा शेर ही ख़ंजर नज़र आने लगा

गाज़ियाबाद (उत्तरप्रदेश)

द्विजेन्द्र द्विज

चार दिन इस गाँव में आकर पिघल जाते हैं आप
पर पहुँच कर शहर में कितने बदल जाते हैं आप
आपके अंदाज़, हमसे पूछिए तो मोम हैं
अपनी सुविधा के सभी साँचों में ढल जाते हैं आप
कुश्तियों, खेलों के चस्के आपको भी ख़ूब हैं
शेर बकरी पर झपटता है बहल जाते हैं आप
सिद्धियाँ मिलने पे जैसे मंत्र-साधक मस्त हों
शहर में होते हैं दंगे, फूल-फल जाते हैं आप
कारवाँ पागल नहीं जो आपके पीछे चले
मंज़िलें आने से पहले 'द्विज' फिसल जाते हैं आप

काँगड़ा (हिमाचल प्रदेश)

नज़्म सुभाष

ख़्वाब हैं गिरवी पड़े और जेब है ख़ाली यहाँ
ज़िन्दगी लगने लगी है इन दिनों गाली यहाँ
पेट भरता है कहाँ साहब किसी तक़रीर से
कुछ तो ऐसा कीजिए जो मिल सके थाली यहाँ
मैं किताबों का उठाता बोझ सर पर किसलिए
चाहिए थी एक डिग्री बन गयी जाली यहाँ
जो ज़मीं से हों जुड़े फ़बता नहीं उन पर ग़ुरूर
झुक के इस्तक़बाल करती फल लदी डाली यहाँ
'नज़्म' दुनिया भर के क़िस्से मत सुनाएँ देश को
आप बस इतना बताएँ क्यों है बदहाली यहाँ

आलमनगर, लखनऊ (उ.प्र.)

के. पी. अनमोल

कभी तो लीक से हटकर ज़रा कुछ कर दिखाता
समन्दर भी किसी दरिया की जानिब चल के जाता
किसी दिन काम का कहकर बचा लेते मुझे तुम
यक़ीनन इक न इक दिन मैं तुम्हारे काम आता
मुझे मालूम है तब घूरते सब लोग मुझको
'ये दुनिया है अजायबघर' अगर उनको बताता
कभी सावित्री होने का मुझे भी मिलता गौरव
किसी दिन मौत के मुँह से उसे मैं खींच लाता
'मरा से राम' का 'अनमोल' रस्ता पार करके
उसे वाल्मीकि के छन्दों में तू भी देख पाता

रुड़की (उत्तराखण्ड)

वीरेन्द्र खरे 'अकेला'

दोनों पैरों को आदत है आपस में टकराने की
कैसे पूरी होगी अपनी ख़्वाहिश मंज़िल पाने की
मिलजुल कर आपस का झगड़ा निपटा लो तो अच्छा है
मिटना हो तो राह पकड़ना कोर्ट, कचहरी, थाने की
तुमसे बिछड़कर यार हमें तो मयख़ाना रास आया है
तुमने क्या तरकीब निकाली है दिल को बहलाने की
बैर अगर आपस में रखना धर्म नहीं सिखलाते हैं
तो फिर सीख हमें किसने दी आपस में भिड़ जाने की
अपने चारों ओर 'अकेला' समझोतों की पलटन है
आख़िर कोशिश की जाएगी किस-किस को समझाने की

छतरपुर (मध्यप्रदेश)

रवि खण्डेलवाल

दाता और भिखारी दोनों को ही आप लिखूँ
दोनों ही इक जैसे किसको किसका बाप लिखूँ
तुमको तुम लिखने कहने में लगता अपनापन
तुम्हीं बताओ कैसे कर मैं 'तुम' को 'आप' लिखूँ
छीना हमने ठौर-ठिकाना, बरगद-पीपल से
पंछी का कैसे कर यारो, मैं संताप लिखूँ
मंत्रों का उच्चारण हो तो समझ में आता है
तू-तू, मैं-मैं को मैं यारो कैसे जाप लिखूँ
सारे के सारे ही बंदे हैं 'रवि' इक जैसे
कैसे एक किसी को मैं चौअन्नी छाप लिखूँ

उज्जैन (मध्यप्रदेश)

डॉ. राकेश जोशी

लाचारी के दौर में कोई लाचारों के साथ नहीं था
तूफ़ानों के डर से कोई मछुआरों के साथ नहीं था
जंगल, बस्ती जहाँ कहीं भी आग लगी थी जिस दिन भी
उस दिन कोई भी अंगारा अंगारों के साथ नहीं था
हर युग में लड़ने वाला हर सैनिक ख़ूब लड़ा था, पर वो
हथियारों के बीच में रहकर हथियारों के साथ नहीं था
सच्चाई के नाम पे जब-जब झूठ छपा था अख़बारों में
अख़बारों का अक्षर-अक्षर अख़बारों के साथ नहीं था
बिकने वाले की कीमत तो तय कर दी बाज़ारों ने पर
बिकने वाला माल कभी भी बाज़ारों के साथ नहीं था

देहरादून (उत्तराखण्ड)

हरीश दरवेश

फल कोई जब भी किसी पेड़ पे पक जाता है
देखने वालों की नज़रों में खटक जाता है
जाने किस नस्ल के होते हैं सियासी घोड़े
जिसपे भी हाथ धरो वो ही बिदक जाता है
देखता हूँ मैं हर इक रोज़ ही चेहरा अपना
आईना भी तो हर इक रोज़ दरक जाता है
आसमां छूने की चाहत में है मुश्किल ये भी
आदमी पाँव उठाते ही सनक जाता है
नाम पर शाइरी के कुछ नहीं करता 'दरवेश'
मन में जो अच्छा-बुरा आता है बक जाता है

बस्ती (उत्तरप्रदेश)

डॉ. ऋषिपाल धीमान ‘ऋषि’

चाँदखेड़ा, अहमदाबाद (गुजरात)

यूँ सबके सामने मेरी उड़ान कुछ भी नहीं
जो छूना चाहूँ तो फिर आसमान कुछ भी नहीं
ख़ुदा के बाद तुम्हारा ही नाम है लब पर
तुम्हारे आगे ये सारा जहान कुछ भी नहीं
उन्हीं को ढूँढते फिरते हैं हम बियाबां में
जिन्होंने क़दमों के छोड़े निशान कुछ भी नहीं
बुलंदियों के मुसाफिर संभल-संभल के चलें
गिरे हुओं के लिए तो ढलान कुछ भी नहीं
मैं सच को जानता हूँ ये भरम मेरा टूटा
जो मैंने जाना कि सच्चा बयान कुछ भी नहीं

दिनेश सिन्दल

जोधपुर (राजस्थान)

न नदियों की, न झरनों की, न बादल की कहानी है
मुहब्बत आँख से टपके हुए जल की कहानी है
गिरा नीचे वो धरती पर छुड़ाया हाथ जिसने भी
नहीं केवल ये न्यूटन पेड़ के फल की कहानी है
तेरी आँखों के दो दीपों को देखा तो लगा मुझको
तले में जो अँधेरा है वो काजल की कहानी है
मुझे देगा वो तपती धूप में शीतल घनी छाया
मेरे हिस्से में तेरे नर्म आँचल की कहानी है
रहो चुप आप दादी अब ये इंटरनेट गाएगा
तुम्हारी लोरियाँ बीते हुए कल की कहानी है

ओमप्रकाश ‘नूर’

रुड़की (उत्तराखण्ड)

अभी बीमार आँखों को उजालों में बदलना है
अभी मुफ़्लिस के हाथों को मशालों में बदलना है
अभी तो भूख बाक़ी है, अभी से सो नहीं जाना
अभी तो पत्थरों को भी निवालों में बदलना है
अभी उनकी हक़ीक़त को जहां वाले नहीं समझे
अभी उनके करिश्मों को सवालों में बदलना है
अभी अहले-सियासत का फ़क़त ये काम है बाक़ी
बचे ईमानदारों को दलालों में बदलना है
अभी मज़दूर मेहनत के सिवा ऐ ‘नूर’ क्या जाने
अभी उसको किताबों में, रिसालों में बदलना है

अजय ‘अज्ञात’

फ़रीदाबाद (उत्तरप्रदेश)

बड़ा अपना-सा लगता है, कोई जब दिल से मिलता है
मगर ये दिल किसी दिल से, बड़ी मुश्किल से मिलता है
किसी में कुछ किसी में कुछ, दिखाई देती है ख़ामी
हमारे मन मुताबिक़ तो बड़ी मुश्किल से मिलता है
बहुत से पेंचो-ख़म आते हैं राहे-ज़िन्दगानी में
यूँ ही आसानी से रस्ता कहाँ मंज़िल से मिलता है
ये टूटे ख़्वाबों का मलबा चला आता यूँ पलकों तक
कोई टूटा सफ़ीना ज्यों किसी साहिल से मिलता है
तेरे पहलू में आकर ऐ ग़ज़ल! दिल है सुकूं पाता
शऊर-ए-ज़िंदगी हमको तेरी महफ़िल से मिलता है

दिनेश त्रिपाठी ‘शम्स’

बलरामपुर (उत्तरप्रदेश)

वक़्त जब इम्तिहान लेता है
हर हक़ीकत को जान लेता है
तोल लेता है पहले पर अपने
तब परिन्दा उड़ान लेता है
भूख भड़की तो जान ले लेगी
लोभ लेकिन ईमान लेता है
मैं उसे दोस्त कैसे कह दूँ वो
मेरी हर बात मान लेता है
वो तमंचे उठा नहीं सकता
हाथ में जो कुरान लेता है

डॉ. हरि फ़ैज़ाबादी

लखनऊ (उत्तरप्रदेश)

हँसते-हँसते बेटी को रुख़सत करे
बाप इतनी किस तरह हिम्मत करे
वो जहन्नुम या उसे जन्नत करे
जैसा चाहे अपना घर औरत करे
कौन ऐसे आदमी के मुँह लगे
जो ज़रा-सी राई को पर्वत करे
आदमी ने ही कहाँ बख़्शा उसे
रहा उस पर किसलिए क़ुदरत करे
जाइए जैसी है नीयत आपकी
रोज़ी में वैसी ख़ुदा बरकत करे

ज्ञानप्रकाश पाण्डेय

कोलकाता (पश्चिम बंगाल)

लफ़्ज़-दर-लफ़्ज़ राज़ खोलेगी
बात निकली है बात बोलेगी
चाँदनी तो गुज़र चुकी कब की
रात अब नक़्शे-पा टटोलेगी
इन अमीरों को कौन समझाए
मुफ़लिसी टाट पे ही सो लेगी
अब न आँगन के और टुकड़े कर
ये सियासत है ज़ह्र घोलेगी
ग़म तो ये है कि दार पर सूरज
बारे-ज़ुल्मत तो आँख ढो लगी

राजमूर्ति 'सौरभ'

गड़गड़ाते बादलों से और कड़कती बिजलियों से
आ चुके हैं तंग हम तो आसमां की धमकियों से
साथ रहकर भी न परिचित हो सके पूरी तरह हम
तुम हमारी ख़ामियों से, हम तुम्हारी ख़ूबियों से
ज़िन्दगी तू ही बता इस प्रश्न का उत्तर मुझे अब
किसलिए जलती हैं इतना मुश्किलें, आसानियों से
किसलिए लगने लगा दफ़्तर में उसका मन न पूछो
अब वो घबराता है, बचना चाहता है छुट्टियों से
बनके दुश्मन वो खड़ी थीं हर क़दम पर रास्ते में
उम्रभर लड़ना पड़ा है ख़ुद की ही कमज़ोरियों से

प्रतापगढ़ (उत्तरप्रदेश)

राम नारायण 'हलधर'

मेरी तक़दीर का सहरा युगों से राह तकता है
न जाने किस जगह उम्मीद का बादल बरसता है
कभी आकाश में गरजा, कभी अख़बार में बरसा
हमारी सूखती फ़सलों की चिन्ता कौन करता है
पुरानी साइकिल की हम मरम्मत को तरसते हैं
हमारे गाँव का सरपंच नित कारें बदलता है
पड़ौसी का जला के घर तमाशा देखने वालो
हवा का रुख़ बदलने में ज़रा-सा वक़्त लगता है
खुदाई कर यहीं पर क़ीमती बेशक खदानें हैं
यहीं पर हलधरों के जिस्म का सोना पिघलता है

कोटा (राजस्थान)

कृष्ण सुकुमार

ख़ुदा बनने की ख़्वाहिश है, ख़ुदा से डर भी लगता है
ज़ुबाँ तक आ तो जाए सच, सज़ा से डर भी लगता है
करम था दोस्तों का, बाँध दी ऐसी हवा मेरी
हवा में उड़ रहा हूँ मैं, हवा से डर भी लगता है
उसे पक्का यक़ीं है जो कहूँगा सच कहूँगा मैं
मुझे अपनी इसी झूठी अदा से डर भी लगता है
तुझे आँखों में सपनों की जगह रखकर भी सोया हूँ
तुझे अपना समझने की ख़ता से डर भी लगता है
बड़ी ही मुफ़लिसी जिनके बिना महसूस होती है
मुझे उस अपनेपन, यारी, वफ़ा से डर भी लगता है

रुड़की (उत्तराखण्ड)

ए.एफ़. नज़र

धरती से अम्बर की हद तक फैला है दुनिया का सच
अपनी-अपनी आँखें सबकी, सबका अपना-अपना सच
हर आँगन में पहरेदारी, हर दरवाज़े पर चिलमन
आता-जाता हर इक रस्ता, ढूँढ रहा खिड़की का सच
अपना रिश्ता क्यूँकर तोड़ें, झूठी ज़िद की ख़ातिर हम
तुझको प्यारा तेरा सच है, मुझको प्यारा मेरा सच
जिनकी राहों में काँटे हैं, फूलों का सच क्यों मानें
तेरे दिल में तेरा सच है, उनके दिल में उनका सच
मैं भी सच्चा तुम भी सच्चे, ये भी सच है वो भी सच
जिन आँखों ने जैसा देखा, उन आँखों का वैसा सच

पिपलाई जिला- सवाई माधोपुर (राज.)

अभिनव अरुण

मेरे हालात को वो दूर से ही जान लेते हैं
जो अपने हैं मुझे आवाज़ से पहचान लेते हैं
भरोसा करने वाले चंद मेरे दोस्त ऐसे हैं
मैं कहता भी नहीं हूँ बात मेरी मान लेते हैं
शिखर अपनी उदासी का कभी चर्चा नहीं करते
वो अपने सामने कोहरे की चादर तान लेते हैं
मुहब्बत पाक जज़्बा है समझ उनको नहीं क्योंकर
जो झूठी शान की ख़ातिर किसी की जान लेते हैं
अजब रंगत ग़ज़ब ख़ुशबू मलंगी और मस्ती भी
बनारस की गली हम दूर से पहचान लेते हैं

बनारस (उत्तरप्रदेश)

ख़ुर्शीद खैराड़ी

उसी की छाँव में बैठे उसी को काटते हो
नहीं इक पेड़ को, तुम ज़िंदगी को काटते हो
हवा में बाँसुरी की धुन चहकते हैं परिंदे
दरख़्तों को नहीं इक सिम्फ़नी को काटते हो
तुम्हारे बाप-दादों को इसी पीपल ने दी छाँव
उठाकर तुम कुल्हाड़ी इक सदी को काटते हो
तुम्हें झूला झुलाती थी इसी बरगद की डाली
लड़कपन की पुरानी दोस्ती को काटते हो
है सचमुच इक दवाखाना घनेरे नीम का पेड़
बड़े बेअक़्ल हो चारागरी को काटते हो

जोधपुर (राजस्थान)

अमित 'अहद'

अगर दिल से कहूँ ये दौर ही मनहूस लगता है
न जाने क्यों मुझे हर आदमी मायूस लगता है
ग़रीबी आँख में अपनी बड़े सपने नहीं रखती
ग़रीबों को मकाँ का बल्ब भी फ़ानूस लगता है
बढ़ाता है धरम के नाम पर जो नफ़रतें दिल में
मुझे वो आदमी दुनिया में दकियानूस लगता है
हवा, बारिश का उनको ख़ौफ़ रहता है हमेशा ही
कि जिनके छप्परों पे कम बहुत ही फूस लगता है
'अहद' उसको ख़ुदा ने यूँ तो बख़्शी है बहुत दौलत
मगर वो शख़्स नीयत से बहुत कंजूस लगता है

सहारनपुर (उत्तरप्रदेश)

समीर परिमल

रिश्तों के यहाँ पल-पल संसार बदलते हैं
हर रोज़ कहानी में किरदार बदलते हैं
होठों पे मुहब्बत है, आँखों में तिजारत है
इनकार बदलते हैं, इक़रार बदलते हैं
आदत है अलग अपनी, फ़ितरत भी जुदा ठहरी
तुम यार बदलते हो, हम कार बदलते हैं
हर मोड़ पे नफ़रत के पत्थर हैं पड़े लेकिन
दिलवाले कहाँ अपनी रफ़्तार बदलते हैं
कमतर न समझ लेना 'परिमल' की फ़क़ीरी को
इक वोट के दम पर हम सरकार बदलते हैं

पटना (बिहार)

भवेश दिलशाद

जान तो क्या निकल रही होगी
ख़ुशबू शीशी बदल रही होगी
सुनते हैं हो गयी पचास की उम्र
अब वो अल्हड़ संभल रही होगी
सिफ़र दिल सिफ़र ज़ेह्न ख़ाली नैन
लड़की औरत में ढल रही होगी
सभी कुछ और कुछ नहीं के बीच
दुनिया रस्सी पे चल रही होगी
एक शै गर पिघल रही है तो
एक 'दिलशाद' जल रही होगी

भोपाल (मध्यप्रदेश)

अशोक श्रीवास्तव

स्वच्छ अपना ये अंत:करण कीजिए
प्रेम का अपने दिल में वरण कीजिए
साँस लेना भी दूभर हुआ है यहाँ
अब प्रदूषित न वातावरण कीजिए
दोस्तों पर भरोसा न करिए बहुत
दुश्मनों का भी वर्गीकरण कीजिए
राम बन जाएँगे शर्त इतनी-सी है
अपने अंदर के रावण से रण कीजिए
प्रेरणा ले सकें दूसरे आपसे
शुद्ध जीवन का यूँ व्याकरण कीजिए

प्रयागराज (उत्तरप्रदेश)

मनोज अहसास

अपने ही पापों से मन घबराता है
सीने में अपराधों का इक खाता है
उसकी मजबूरी समझूँ या अपना दुख
गुलशन से सहरा में कोई आता है
लाखों कोशिश कर के माना है हमने
जो होना है आखिर वो हो जाता है
दिल में कोई भीड़ खड़ी है इस कारण
तेरा चेहरा साफ नहीं दिख पाता है
ढलता है जब सूरज अपनी भी छत पर
तब जग का अँधियार समझ में आता है

सहारनपुर (उत्तरप्रदेश)

डॉ. अनुज नागेन्द्र

न गीता पर कोई ख़तरा न है क़ुरआन ख़तरे में
मगर दुनिया में है मासूम-सा इंसान ख़तरे में
वहाँ त्योहार की कैसे मुबारकबाद दी जाए
जहाँ पर फूल से बच्चों की हो मुस्कान ख़तरे में
कोई पूछे किसानों से कि उन पर क्या गुज़रती है
कभी गेहूँ पे आफ़त है, कभी है धान ख़तरे में
कभी मन्दिर, कभी मस्जिद को लेकर सर फुटौवल है
है इन नादानियों की वज्ह से इंसान ख़तरे में
यहाँ पर आदमी में आदमी मिलता नहीं है अब
पड़ी है आदमीयत की 'अनुज' पहचान ख़तरे में

उमापुर, लालगंज (प्रतापगढ़)

विकास

हवस परस्त है दिल का मकान ले लेगा
दिलों में रह के भी रिश्तों की जान ले लेगा
लबों के झूठ को सच में बदलने की ख़ातिर
वो अपने हाथ में गीता-क़ुरान ले लेगा
किसे पता था कि पैदल निकल पड़ेंगे सब
नया ये रोग ज़माने की शान ले लेगा
उसे यक़ीन न होगा मेरी वफ़ा पर तो
हँसी-हँसी में मेरा इम्तिहान ले लेगा
कभी जुनून की हद से जो दूर जाएगा
वो अपने हक़ में फ़लक का वितान ले लेगा

मुंगेर (बिहार)

आशा शैली

रफ़्ता-रफ़्ता जिंदगी का रुख़ बदलने ही लगा
आदमी फिर वक़्त के साँचे में ढलने ही लगा
कल तलक जो भूख के सहता रहा ज़ुल्मो-सितम
आज उसके हाथ में पत्थर मचलने ही लगा
ख़ुश बहुत होता था जो ख़ुशरंग शीशे तोड़कर
मेरी ख़ामोशी से वो पत्थर पिघलने ही लगा
वक़्त का दरिया कभी उल्टा कभी सीधा बहा
और वो सूरज था दिन के साथ ढलने ही लगा
पेड़ वो तन्हा हवाओं के थपेड़े सह गया
हार कर तूफ़ान 'शैली' रुख़ बदलने ही लगा

लालकुआँ (नैनीताल)

डॉ. भावना

मैं नये सपने सजाऊँ आपको दिक़्क़त है क्या
लौटकर वापस न आऊँ आपको दिक़्क़त है क्या
साथ मेरा दे नहीं सकते तो फिर क्या सोचना
मैं लड़ूँ या भाग जाऊँ आपको दिक़्क़त है क्या
सूखे मेवे और मक्खन आपको ही हो नसीब
मैं चने पर दिन बिताऊँ आपको दिक़्क़त है क्या
बाँधकर पट्टी नयन पर मैं न देखूँ पाप सब
मैं भी गांधारी हो जाऊँ आपको दिक़्क़त है क्या
जल रहा हो देश पर हमको अमन से काम है
नीरो-सा बंसी बजाऊँ आपको दिक़्क़त है क्या

मुज़फ़्फ़रपुर (बिहार)

डॉ. रमा सिंह

अपनी तुमसे बात छुपा लूँ छोड़ो भी
नज़रों से मैं तुम्हें चुरा लूँ छोड़ो भी
माहताब बनकर उतरे हो आँगन में
कहते हो मैं पलक गिरा लूँ छोड़ो भी
प्यार में मिटने की खाई जिसने कसमें
मरने से मैं उन्हें बचा लूँ छोड़ो भी
दुश्मन से मैं प्यार करूँ कैसे कह दो
काँटा अपने पाँव चुभा लूँ छोड़ो भी
आज नहीं तो कल जग जाहिर होगा ही
उड़ता पंछी कहीं छुपा लूँ छोड़ो भी

ग़ाज़ियाबाद (उत्तरप्रदेश)

श्रद्धा जैन

मातम करना ख़ुशी मनाना आता है
ज़िन्दा हैं हम ये दिखलाना आता है
हम फल वाले पेड़ बने हैं मेहनत से
क़िस्मत को पत्थर बरसाना आता है
इक दिन चट्टानों से भी जल निकलेगा
पत्थर तोड़ के पानी लाना आता है
जीत हमारी नामुमकिन लगती है मगर
नामुमकिन से 'ना' को हटाना आता है
तल्ख़ हकीकत के ग़म पर मरहम रखने
आस लिए इक ख़्वाब पुराना आता है

सिंगापुर

संजू शब्दिता

पहले तो ख़ुद की जान को सोचा
बाद उसके जहान को सोचा
ज़िन्दगी भर ज़मीन का खाया
मौत तक आसमान को सोचा
तंग बेरोज़गारी से आकर
आख़िरश अब दुकान को सोचा
आज शालीन पेश आया वो
हमने उसके गुमान को सोचा
वो ज़मींदोज़ हो गया तबसे
जबसे हमने उड़ान को सोचा

इलाहाबाद (उत्तरप्रदेश)

अल्पना सुहासिनी

पत्थर दिल शहरों में आकर कितने ही पछताये लोग
काँच की दीवारों में घिरकर कितने हैं घबराये लोग
बेगानापन, बेचैनी और कुंठा भी तनहाई भी
शहरों में क्या-क्या सहते हैं, गाँवों से उकताये लोग
जाने कैसी मनहूसी-सी छाई है दुनिया भर में
बस तस्वीरों में दिखते हैं अब तो कुछ हर्षाये लोग
मुँह में राम बग़ल में छुरियाँ आज सभी का ही सच है
अंदरखाने ज़हर भरा हो पर बाहर मुस्काये लोग
बाग़ की सारी कलियाँ सहमीं, बाग़बान और भँवरों से
जाने क्या, कब कर बैठें ये अजब-ग़ज़ब पगलाये लोग

ग़ाज़ियाबाद (उत्तरप्रदेश)

मालिनी गौतम

वो औरत रोज़ अपने आप पर यूँ जुल्म ढाती है
स्वयं भूखी रहे पर रोटियाँ घर को खिलाती है
नशे में धुत्त अपने आदमी से मार खाकर भी
बहुत ज़िन्दादिली से दर्द को वो भूल जाती है
वो बहती इक नदी है तुम उसे पोखर समझना मत
है इतना वेग उसमें राह का पत्थर हटाती है
समुन्दर दे नहीं सकता किसी को बूँदभर पानी
वो मीठी-सी नदी फिर भी समुन्दर में समाती है
जिसे दुनिया में आने से ही पहले मार देते तुम
गलाकर जिस्म अपना वो तुम्हें दुनिया में लाती है

संतरामपुर (गुजरात)

कविता विकास

करो कोशिश तो लाजिम है सभी ज़ख़्मों का भर जाना
कभी अच्छा नही होता किसी रिश्ते का मर जाना
तेरे पहलू में आकर ऐ मुहब्बत! मैंने देखा है
मुकद्दर का सँवर जाना, मुकद्दर का बिखर जाना
छुपाए भी कहाँ छुपती किसी से दिल की बेचैनी
निगाहें भांप जाती हैं इधर आना, उधर जाना
किसी दिल में नहीं आसां बना लेना जगह अपनी
बहुत आसान है लेकिन किसी दिल से उतर जाना
समय के साथ ख़ुद को भी बदलना सीख ले 'कविता'
जहाँ लगता नहीं मन है वहाँ क्यूँकर ठहर जाना

कोयलानगर, धनबाद (झारखण्ड)

ममता किरण

बाग़ जैसे गूँजता है पंछियों से
घर मेरा वैसे चहकता बेटियों से
घर में आया चाँद उसका जानकर वो
छुप के देखे चूड़ियों की झिर्रियों से
दिल का टुकड़ा है डटा सीमाओं पर तो
सूना घर चहके है उसकी चिट्ठियों से
बंद घर को खोलकर देखा जो उसने
एक टुकड़ा धूप आयी खिड़कियों से
फ़ोन वो ख़ुशबू कहाँ से ला सकेगा
वो जो आती थी तुम्हारी चिट्ठियों से

गुरुग्राम (हरियाणा)

मंजुल निगम

ज़िन्दगी के हाथ से फिसला हुआ
वक़्त जो गुज़रा वो फिर किसका हुआ
जिसने चाहा जोड़ना हर एक को
आदमी अक्सर वही तनहा हुआ
ज़िन्दगी! रफ़्तार तेरी है ग़ज़ब
तुझसे तो हर शख़्स है पिछड़ा हुआ
क़ीमतें बढ़ती गयीं हर चीज़ की
सिर्फ़ इक इंसान ही सस्ता हुआ
क्या लगाना दिल से 'मंजुल' बेवजह

द्वारका (नई दिल्ली)

असमा सुबहानी

सबकी नज़रों से छिपकर रो पड़ती है
सजदे में वो रख के सर रो पड़ती है
जब भी बादल तेज़ बरसने लगते हैं
बरखा के सँग वो खुलकर रो पड़ती है
हसरत कुछ दिन आँखों में पलती है फिर
आँखों से इक दिन गिरकर रो पड़ती है
जाने क्या दुखता है भीतर ही भीतर
हँसते-हँसते वो अक्सर रो पड़ती है
शायद इस मिलने को मिलना कहते हैं
नदिया सागर से मिलकर रो पड़ती है

रुड़की (उत्तराखण्ड)

आशा पांडेय ओझा

कौन सुनेगा नाले पगले
गीत बनाकर गा ले पगले
उतनी उजली काया होगी
जितने धंधे काले पगले
आग का दरिया पग-पग जीवन
गिनता है क्या छाले पगले
जिनको तू रिश्ते कहता है
वो तो हैं सब जाले पगले
पेट मुँआ कब भरता ऐसे
देख सबूरी खाले पगले

उदयपुर (राजस्थान)

डॉ. आरती कुमारी

घेरा हमको मौत ने कैसे कटें दिन
जी रहे डर-डर के हम साँसों को गिन-गिन
आप घर से दूर नगरी में फँसे हो
कैसे मुश्किल काटूँ बोलो आपके बिन
दिल तड़प कर जा लगे सीने से तेरे
हाँ, अभी ये भी नहीं है बात मुमकिन
ये सियासत थालियाँ बजवा रही है
किस तरह जाएँगे मजदूरों के दुर्दिन
प्रेम के मंदिर में दीपों को जलाये
राह अपने देव की देखे पुजारिन

मुज़फ़्फ़रपुर (बिहार)

सिया सचदेव

दिल पर दाग लगाया हमने उसका क्या
अपना खून जलाया हमने उसका क्या
दुख जो तुम्हें बताया तो तुम तड़प उठे
वो जो दर्द छुपाया हमने उसका क्या
माँग रहे हो तुम मुझ से खुशियों का हिसाब
बरसों दर्द उठया हमने उसका क्या
कौन से मुँह से उस पर हम इल्ज़ाम धरें
धोका खुद ही खाया हमने उसका क्या
एक ज़रा-सी बात पे रिश्ता तोड़ लिया
अब तक साथ निभाया हमने उसका क्या

बरेली (उत्तर प्रदेश)

आरती 'अशेष' चितकारिया

ज़िन्दगी में ज़ख़्म खाना लाज़िमी है
कोई जीने का बहाना लाज़िमी है
कोई अपना जीत जाए इस ग़रज़ से
ख़ुद हमारा हार जाना लाज़िमी है
ये जली तो उम्रभर सोने न देंगी
लौ उम्मीदों की बुझाना लाज़िमी है
जब न मुमकिन हो कोई ताज़ा कहानी
तब कोई किस्सा पुराना लाज़िमी है
है मुनासिब दर्द सारे भूल जाना
ग़म छिपाकर मुस्कुराना लाज़िमी है

देहरादून (उत्तराखण्ड)

सोनिया वर्मा

डर रहा है अब जहां अनुपात का दर देखकर
बेटियाँ मारी गयीं इच्छाओं का सर देखकर
क्यों हो हैरां हाथ में अपनों के पत्थर देखकर
आदमी की ज़ात समझा कौन पैकर देखकर
हक़ की बातें करने वाले लोग ही देंगे दग़ा
जाँच लो हर आदमी को तुम संभल कर, देखकर
सादगी को जो कभी ज़ेवर समझता था वही
आज कैसे मर मिटा है रूप सुंदर देखकर
क्या छुपा है किसके मन में, अब नहीं है पूछना
और भी उलझा करेंगे उनके उत्तर देखकर

रायपुर (छत्तीसगढ़)

अमृता कश्यप

देती नहीं है साथ भी तक़दीर हमेशा
होती है नहीं ख़्वाब की ताबीर हमेशा
पेड़ों की जगह बोओगे कंक्रीट अगर तुम
पाओगे कहाँ पीने को फिर नीर हमेशा
सरहद पे लुटा देते हैं वो जान भी अपनी
हाथों में लिए रहते हैं शमशीर हमेशा
इक इंच भी देंगे न ज़मीं पाक तू सुन ले
अपना था ये अपना रहे कश्मीर हमेशा
मज़बूत इरादे हों अगर साथ तुम्हारे
होकर ही रहे ख़्वाब की ताबीर हमेशा

रुड़की (उत्तराखण्ड)

मोनिका शर्मा सारथी

जहाँ में अपनी तहज़ीबों की इक पहचान है भारत
है अपनी आन, अपनी शान है, ज़ीशान है भारत
में हूँ इक रूह जो ओढ़े खड़ी हूँ जिस्म मिट्टी का
मेरी चाहत, मेरा जज़्बा, मेरा ईमान है भारत
बिखरती है ज़माने भर में जिनसे प्यार की ख़ुशबू
कई ऐसे ही फूलों का बड़ा गुलदान है भारत
इसे आज़ाद करने को कई वीरों नें दी जानें
सभी उन पाक रूहों पे सदा क़ुर्बान है भारत
ग़ज़ल कैसे न भारत पर कहे यह 'सारथी' अपनी
रदीफ़ो-क़ाफ़िया है, गीत का उन्वान है भारत

रक्कड़, ज़िला-काँगड़ा (हिमाचल प्रदेश)

डॉ. सीमा विजयवर्गीय

सिलके दे देता इसे अक्सर रफ़ूगर
पर उधड़ती जा रही फिर-फिर ये चूनर
है सफ़र थोड़ा, मिलेंगे कब, कहाँ पर
साथ चलते हैं चलो सब कुछ भुलाकर
भाव अपनी बात खुलकर कह रहे हैं
अब ग़ज़ल बेहतर सँवारेगी कलेवर
ज्वार से अब मत डुबो इन बस्तियों को
चाँद को तू छू नहीं पाएगा सागर
बाढ़ ने हालात ऐसे कर दिए हैं
घर में जैसे आ गया हो इक समंदर

अलवर (राजस्थान)

अंजना छलोत्रे 'सवि'

मुहब्बत का रोशन सितारा हुआ
मिलन जो हमारा तुम्हारा हुआ
समाधि पे जिसकी जलाया दिया
सिपाही वतन का वो प्यारा हुआ
उसी रात दुश्मन दगा कर गया
उसी दिन तो था भाईचारा हुआ
मेरा वक्त मुश्किल से गुजरा मगर
नहीं था वह सरहद पर हारा हुआ
जरा देख कितने मिले हैं सलाम
तिरंगे का जो था सहारा हुआ

टिमरनी (भोपाल)

अनुज 'अब्र'

पीर इक रोज़ ही सीने से उठा करती है
और ये भी कि करीने से उठा करती है
घोल देती है अलग-सा ही नशा रग-रग में
एक खुशबू जो पसीने से उठा करती है
हर पड़ोसी से बिरादर की तरह पेश आओ
ये सदा रोज़ मदीने से उठा करती है
देखकर लिफ़्ट की बैसाखी पे हर रोज़ मुझे
टीस इक दर्द की ज़ीने से उठा करती है
जूझना कैसे है मुश्किल से सिखाती है 'अनुज'
ये जो आवाज़ सफ़ीने से उठा करती है

लखनऊ (उत्तरप्रदेश)

विनोद 'निर्भय'

अगर संघर्ष के तल पर उतर पाओ, उतर जाओ
जो सोने की तरह तपकर निखर पाओ, निखर जाओ
सिखाया बाज ने मुझको, अगर शुरुआत करनी हो
पुराने पंख को अपने कुतर पाओ, कुतर जाओ
बड़ों की बात पर इतना बिफरने की ज़रूरत क्या
पड़े जब डाँट हँसकर तुम गुज़र पाओ, गुज़र जाओ
ये जीवन एक अवसर है इसे यूँ ही न जाने दो
ज़ेह्न में ख़्वाब को रख सँवर पाओ, सँवर जाओ
मैं तुमसे ये नहीं कहता कि सागर ही बनो 'निर्भय'
जो दरिया बन के खेतों में बिखर पाओ, बिखर जाओ

जड़ापुर, ज़िला-गोरखपुर (उ.प्र.)

सागर आनन्द

आफ़त के आने का नम्र निवेदन है
बूढ़े शेर के हाथों में जो कंगन है
पलकों के बौड़म-बौड़म चौहद्दी में
आँसू-आँसू आँसू-आँसू अंजन है
बादल राजा नाच रहे हैं मस्ती में
बारिश के पैरों में औघड़ छनछन है
ऐसे समझो रे साथी इस कलयुग में
अपने ही लोगों से असली अनबन है
नफ़रत केवल नफ़रत केवल ऐ साधो!
दुनिया जैसे नफ़रत का गठबंधन है

पटना (बिहार)

अरविन्द उनियाल 'अनजान'

जो पिछले साल दिखती थी वही इस साल दिखती है
ग़रीबों की दशा तो आज भी बदहाल दिखती है
कोई भूखा, कोई नंगा, कोई फुटपाथ पर लेटा
किसी के सर के ऊपर बस फटी तिरपाल दिखती है
कहाँ हैं वो छिपे बैठे जिन्हें कहते हैं अच्छे दिन
हमें तो आज भी हर झोपड़ी कंगाल दिखती है
चुनावी घोषणा जब खूब होती हैं किसानों पर
तो फिर खेती-किसानी क्यों नही खुशहाल दिखती है
हुई माना तरक्की पर कोई 'अनजान' समझा दे
ग़रीबी क्यों सड़क पर भूख से बेहाल दिखती है

श्रीनगर (उत्तराखण्ड)

अभिषेक सिंह

शहर के हाथ जंगल की जवानी बेच मत देना
सरे बाज़ार पुरखों की निशानी बेच मत देना
निहायत ख़ूबसूरत ज़िन्दगानी बेच मत देना
नशे के पास तू होश और जवानी बेच मत देना
इसी से तो वतन का मान दुनिया मे रहा सदियों
किसी भी हाल में आँखों का पानी बेच मत देना
यहाँ हर मोड़ पर खुशबू की बोली लग रही है दोस्त
यहाँ तुम अपने मन की रातरानी बेच मत देना
पिता ने हाथ पर बाँधा था ये कहते हुए मेरे
घड़ी जब हो भी जाये ये पुरानी बेच मत देना

गया (बिहार)

जनार्दन पाण्डेय 'नाचीज़'

जहालत के अँधेरे में रहेगी रौशनी कब तक
परिंदों की तरह भटकेगा आख़िर आदमी कब तक
मुझे रैदास के कठवत से बाहर मत निकालो तुम
तुम्हारे पाप की ढोती रहूँगी गन्दगी कब तक
हज़ारों दीप घाटों पर जले, अच्छा लगा लेकिन
युवाओं के बुझे चेहरों पे आएगी ख़ुशी कब तक
ज़रूरी काम सारे तीरगी में कर रही दुनिया
सराही जाएगी ग़ज़लों में आख़िर चाँदनी कब तक
तबस्सुम, ज़ुल्फ़, लब, रुख़सार से बाहर भी दुनिया है
हिसारे-हुस्न में बँधकर रहेगी शायरी कब तक

मऊ (उत्तरप्रदेश)

डॉ. लवलेश दत्त

आदमी से आदमी का प्यार अब दिखता नहीं
त्याग, करुणा और पर उपकार अब दिखता नहीं
भूख के तो दिख रहे हैं हर तरफ़ बर्तन नये
रोटियों का पर सही आकार अब दिखता नहीं
उठ रही हर रोज़ इक दीवार आँगन में यहाँ
खिलखिलाता वो बड़ा परिवार अब दिखता नहीं
कल तलक़ तो शहर भर में था बहुत चर्चित मगर
वो तुम्हारे नाम का अख़बार अब दिखता नहीं
रोज़ आधी रात तक सड़कों पे फैला था कभी
वक़्त की आँधी में वो बाज़ार अब दिखता नहीं

बरेली (उत्तरप्रदेश)

पंकज त्यागी 'असीम'

कभी सूरज, कभी चंदा सितारे बात करते हैं
अगर हो साथ तुम तो सब नज़ारे बात करते हैं
नदी, पर्वत, समुंदर, पेड़, झरने, ओस की बूँदें
सुनो जो तुम तो ये सारे के सारे बात करते हैं
अचानक ही बड़ी अच्छी-सी लगने लगती है दुनिया
वो जब महबूब के दिलकश इशारे बात करते हैं
वे सिग्नल पर खड़े बच्चे, वे कूड़ा बीनने वाले
कभी सुनना कि वे क्या-क्या बेचारे बात करते हैं
जो हैं बदराह पे और घूसखोरी जिनकी फ़ितरत है
मैं हैरां हूँ कि वे किसके सहारे बात करते हैं

रुड़की (उत्तराखण्ड)

संदीप 'सरस'

सदा सक्षम ग़रीबों की कमाई छीन लेता है
किसी मजबूर चेहरे की लुनाई छीन लेता है
बताओ ये धरा का दूसरा भगवान है कैसा
न हो पैसा तो रोगी से दवाई छीन लेता है
हज़ारों बार मरता है अभावों की व्यथा से जब
पिता अपने ही बच्चे की पढ़ाई छीन लेता है
बढ़ी है शर्करा जब से बहुत मजबूर है बेटा
पिता के हाथ से जबरन मिठाई छीन लेता है
जमाने में सृजन का आज ठेकेदार है ऐसा
क़लम देकर क़लम की रोशनाई छीन लेता है

बिसवां, ज़िला- सीतापुर (उ.प्र.)

सुधीर बमोला

अगड़ों में बँट गये, कभी पिछड़ों में बँट गये
हम लोग जात-पात के झगड़ों में बँट गये
लड़ते रहे समाज में अपनों से ही मगर
हासिल हुआ न कुछ हमें टुकड़ों में बँट गये
कुछ लोग बेबसी में बुज़ुर्गों को छोड़ कर
अब गाँव और शहर के दो पलड़ों में बँट गये
जब स्कूल के लिबास में थे एक थे सभी
कॉलेज जा के रौब से कपड़ों में बँट गये
लफ़्ज़ों के बम समाज में फटने लगे हैं फ़िर
सदभाव, प्यार, दोस्ती चिथड़ों में बँट गये

ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

सिद्धांत दीक्षित

चाह कर अब हो नहीं पाऊँगा मिर्ची की तरह
घेर रक्खा है मुझे दुनिया ने चींटी की तरह
घूरती और नोंचती रहती है मुझको हर निगाह
बन गया हूँ मैं हक़ीक़त कह के लड़की की तरह
अब भी जारी है सियासी दीमकों का चाटना
मुल्क होता जा रहा है ठूँठ लकड़ी की तरह
आग लगती है तो मरना तय हैं ऐसी ट्रेन में
इश्क़ में दर है नहीं आपात खिड़की की तरह
नारियल की ही तरह 'सिद्धांत' ख़ुद को ढाल लो
वरना पक जाने पे फट जाओगे ककड़ी की तरह

बारा दीक्षित, ज़िला- देवरिया (उ.प्र.)

कमल कर्मा 'के.के'

तमाम शहर को ज़िन्दा जला रही है भीड़
न जाने कौनसी दुनिया बना रही है भीड़
हमारी आँखों से आँसू टपकने वाले हैं
तुम्हारा, मेरा भी नंबर लगा रही है भीड़
किसी की मौत पे मातम मना रहे हैं लोग
किसी के क़त्ल पे ख़ुशियाँ मना रही है भीड़
ये रोज़-रोज़ का मातम सहा नहीं जाता
ज़मीं पे लाश की माला बिछा रही है भीड़
हमें ख़ुशी है कि जंगल बचा लिया है मगर
हमारे शहर को जंगल बना रही है भीड़

इन्दौर (मध्यप्रदेश)

रामनाथ 'बेख़बर'

ज़मीं को खा रही है आसमान की ख़्वाहिश
जहां में फिर भी बढ़ी है उड़ान की ख़्वाहिश
भटक रहे हैं सभी शहरे-नौ के जंगल में
घरों से दूर ले आई मकान की ख़्वाहिश
शिखर पे बैठ समंदर नसीब कैसे हो
नदी के मन में जगी है ढलान की ख़्वाहिश
कुचल रहे थे जो सदियों से यार फूलों को
उन्हीं के सर पे चढ़ी फूलदान की ख़्वाहिश
हमें भी जाना है दुनिया से चार काँधे पर
जहां में छोड़ के सारे जहान की ख़्वाहिश

कोलकाता (पश्चिम बंगाल)

अनिल 'मानव'

जब उजाले में अँधेरा जाएगा
तो यक़ीनन जां से मारा जाएगा
जुर्म सहने वाला भी इतिहास में
कोई भी हो दोषी माना जाएगा
तुम हो कठपुतली किसी के हाथ की
नाचते हो तो नचाया जाएगा
आज की ख़ुशियाँ न छीनों आज से
कल का क्या है कल ही देखा जाएगा
तुम रबर से लोहा 'मानव' अब बनो
गर दबोगे तो दबाया जाएगा

तिल्हापुर, कौशाम्बी (उत्तरप्रदेश)

डॉ. पंकज कर्ण

सबकुछ अपने आप संभाला जाएगा
अर्थ प्रबंधन कब तक टाला जाएगा
पहले हर भूखे को उनके हक़ की दें
मेरे अंदर तब ही निवाला जाएगा
पहले उनको अपना तो होने दें फिर
आस्तीन में सांप भी पाला जाएगा
सबको न्याय सभी को उनका हक़ देंगे
वोट है, जुमला फिर से उछाला जाएगा
रूप बदल 'पंकज' बहेलिया आया है
जाल बिछेगा, दाना डाला जाएगा

रमना, ज़िला-मुज़फ़्फ़रपुर (बिहार)

सत्येन्द्र गोविन्द

हाँ भले ही ठोकरें खाकर मिले
जो मिले मुझको ज़रा बेहतर मिले
फूल की चाहत सभी को है मगर
क्या भरोसा कब किसे पत्थर मिले
सोचता है वो किनारे पर खड़ा
काश! कुछ मोती उसे बहकर मिले
आप जिसकी रोटियों पर हैं पले
वो भला क्यों आप से डरकर मिले
हर तरफ 'गोविन्द' है चिन्ता यही

मोतिहारी (उत्तरप्रदेश)

उत्कर्ष अग्निहोत्री

हैरान हूँ ये देखकर कितना बदल गया
लोहा ज़रा-सी आँच में आकर पिघल गया
बस्ती की आग उसके प्रयासों से बुझ गयी
लेकिन वो शख़्स आग बुझाने में जल गया
गुस्ताख़ियाँ भी खूब प्रशंसित हैं इन दिनों
जीने का आज तौर तरीका बदल गया
बेटे ने फिर विदेश से आऊँगा कह दिया
झूठी तसल्लियों से वो बूढ़ा बहल गया
मैं चाहता था कानों में भगवत कथा पड़े
जो भी मिला वो दूजे की निंदा उगल गया

फ़र्रुख़ाबाद (उत्तरप्रदेश)

ईशान अहमद

है रात सजाने में सहयोग हमारा भी
चमके हैं अगर जुगनू टूटा है सितारा भी
हालात बिगड़ने के दोषी नहीं केवल हम
कुछ दोष हमारा है कुछ दोष तुम्हारा भी
ये शाम के माथे पर सिन्दूर भरा किसने
क्या ख़ूब नज़र आये डूबा हुआ तारा भी
वादे थे किये जिसने हर हाल में जीने के
वो साथ नहीं आया मुश्किल में पुकारा भी
ईशान हवाओं से क्यूँ मुझको बचाया है
बुझता हुआ दीपक था हालात का मारा भी

नजीबाबाद (उत्तरप्रदेश)

एक नदी गुजर गयी-बुद्धिनाथ मिश्र

एक नदी गुजर गयी
ताल के बगल से
कह न सका कुछ ठहरा जल
बहते जल से।

पिंजरे का पंछी क्या बोले
बनपाखी से
पाँवों का बिछुआ
क्या बोले बैसाखी से
बाँझ डाल क्या बोले
बौरे कोंपल से!

लोरियाँ सुनी घन की
सावन के झूलों ने
मेड़ों की डाँट सुनी
सरसों के फूलों ने
सुधि के निर्माल्य गिरे
धानी आँचल से।

हल्की-सी आहट पर
बंद द्वार का खुलना
तोड़कर चटानों को
निकले जैसे झरना
दोने भर नशा माँग
लायी जंगल से।

देउथा हाउस 5/2, वसंत विहार एन्क्लेव,
देहरादून-248006, मो. 9412992244

मैं छूट गया –सूर्य प्रकाश मिश्र

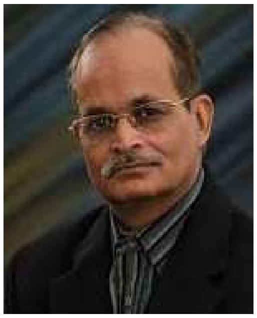

तुम शीशे के उस पार कहीं
मैं छूट गया इस पार प्रिये
रिश्तों के आँगन चौबारे
सब बदल गये आकार प्रिये

चौखट पर उँगली के निशान
आँखें सहलाया करती हैं
कुछ दिये पुरानी यादों के
चुपचाप जलाया करती हैं
समझाने की जिद में तकिया
खुद भीग गया हर बार प्रिये

घुन गया छड़ी का एक सिरा
रुख बदल रही थोड़ा-थोड़ा
चश्मा लंगड़ाया करता है
पर अब तक साथ नहीं छोड़ा
दिन हुए बड़े रातें लम्बी
छोटा लगता अखबार प्रिये

टूटी-फूटी, खुरदुरी, मुड़ी
बातों में खोट नहीं लगती
लहजा चाहे जैसा भी हो
अब दिल को चोट नहीं लगती
ये नया तरीका जीने का
सीखा है पहली बार प्रिये

जिन्दगी और धोती दोनों
लग रहीं एक जैसी ही हैं
जो तहें लगायीं थी तुमने
वो तहें अभी वैसी ही हैं
रह गई महक उन हाथों की
जो मिली हमें उपहार प्रिये

घुटने के दर्द की गोली अब
बिल्कुल आराम नहीं देती
सूखी खाँसी पड़ गई गले
जाने का नाम नहीं लेती
लड़ रहा अभी पर पता नहीं
कब मिल जायेगी हार प्रिये

बी 23/42 ए के
बसन्त कटरा (गाँधी चौक)
खोजवा, दुर्गाकुण्ड
वाराणसी 221001
मोबाइल 09839888743

बिल्कुल मेरे पापा जैसे

– अरविंद कुमार 'साहू'

दादा जी ने इस मुहल्ले में इसी महीने से नया घर लिया है। सरकारी स्कूल से अध्यापक रिटायर हुए हैं। उनकी कोई संतान नहीं है । आस-पास कोई रिश्तेदार भी नहीं है। दादी जी कुछ बीमार रहती हैं सो, एक नौकरानी रख ली है। बर्तन माँजना और झाड़ू पोंछा कर जाती है। रसोई के काम में भी दादी का हाथ बंटा लेती है।

नौकरानी के साथ उसकी यही कोई पाँच बरस की एक प्यारी सी बिटिया गुड़िया भी आती है। बड़ी प्यारी बातें करती है। खूब बोलती है। सब से हिल मिल गई है। दौड़-दौड़ कर खूब काम भी करती है। जब तक गुड़िया घर में रहती है, घर गुलजार रहता है। उससे बातें करके दादा जी और दादी जी दोनों का समय अच्छी तरह कट जाता है। लेकिन उसके जाते ही फिर सन्नाटा पसर जाता है। दादा जी को इस घर में बच्चों की कमी बहुत अखरती है।

एक दिन दादा जी ने गुड़िया से पूछा ''बेटी ! तुम स्कूल क्यों नहीं जातीं ?''

गुड़िया बोली ''मेरे पापा मुझे स्कूल ही नहीं ले जाते।''

''अच्छा ?'' दादा जी को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने फिर पूछा, ''तुम्हारे पापा कहाँ रहते हैं? क्या काम करते हैं, जो उनको इतनी भी फुर्सत नहीं मिलती ?'' गुड़िया ने बड़ी मासूमियत से कहा, ''मेरे पापा बहुत दूर चले गये हैं।'' दादाजी के दिल को एक धक्का सा लगा। उन्होंने फिर पूछा, ''कहाँ चले गए ?'' गुड़िया ने फिर उसी मासूमियत से जवाब दिया, ''पता नहीं, मैंने उन्हें कभी नहीं देखा।'' पास मे बर्तन माँज रही उसकी माँ ने धीरे से कहा, ''दादा जी, वो इस दुनिया से दूर चले गये, एक दुर्घटना में ईश्वर ने उन्हें अपने पास बुला लिया।''

''ओह!'' दादाजी उदास होकर चुप हो गये।

कुछ देर बाद गुड़िया ने दादा जी से पूछा, ''दादा जी! आप जानते हैं मेरे पापा कहाँ गये हैं ?''

''हाँ बेटा।'' दादा जी के पास और कोई जवाब नहीं था।''

गुड़िया चहक कर बोली, ''दादाजी ! आप मेरे पापा के पास जाना तो उनसे कहना कि आपकी गुड़िया उन्हें बहुत याद करती है। मुझे उनके साथ स्कूल जाना है। सब बच्चों की तरह उनकी उंगली पकड़ कर।''

''ठीक है बेटे।'' दादा जी भला और क्या बोलते। उनका मन गुड़िया की मासूमियत से दुखी हो गया था। इतनी छोटी सी नादान बच्ची और उस पर गरीबी के साथ दुखों का पहाड़। भला वह स्कूल कैसे जायेगी ? उनका मन गुड़िया के लिये कुछ सोचने लगा।

हफ्तों बाद, आज दादा जी बड़े खुश थे। उनको पहली बार पेंशन मिली है। घर-गृहस्थी के लिए खरीदारी करने का मन है। उन्होंने बंद गले का पुराना कोट निकाल कर पहना। टोपी लगाई, चश्मा चढ़ाया। झोला लिया और छड़ी टेकते हुए बाजार जा पहुँचे। वहाँ फल-सब्जियों के दाम पूछते-पूछते वे परेशान हो गये।

''बाप रे ! इत्ती मंहगाई और पेंशन इत्ती कम। पहले तो थोड़े से रुपयों मे बहुत कुछ मिल जाता था। अब क्या करें? बहुत जरूरी समान ही खरीद पायेंगे। आटा, चावल, दाल या यूं कहें कि पूरे महीने की खरीदारी करनी है। दादी जी की दवा भी लेनी है। बेचारी कई दिनों से बिस्तर पर पड़ी हैं।

सारी खरीदारी में ही दादा जी के काफी रुपए खर्च हो गये। उदासी से सोचने लगे कि थोड़े बचे पैसों में और क्या मिल सकता है ? तभी दादा जी को गुड़िया की याद आयी। कितनी प्यारी बच्ची है। अब भी रोज घर में आती है। प्यारी-प्यारी बातें करती है। खूब हँसाती है। दिन भर का तनाव, दुख, दर्द सब भुला देती है। लेकिन उसके पापा नहीं हैं। घर में गरीबी है। अच्छे भोजन व पढ़ाई की सुविधा भी नहीं है। आखिर दादा जी ने एक निर्णय ले ही लिया। वे किताबों की दुकान पर जा पँहुचे। बचे हुए रुपयों से अक्षर और गिनती की किताबें, कापियाँ, पेंसिल और एक बस्ता खरीद डाला। एक चॉकलेट और थोड़ी सी टाफ़ियाँ भी ले लीं।

उन्होंने सोच लिया था। गुड़िया कल से स्कूल जरूर जाएगी। अपने बाकी खर्चों की भरपाई वे अमीर घरों के बच्चों को ट्यूशन पढ़ा कर करेंगे। रिक्शे पर सारा समान लादे, घर लौटते हुए दादा जी और ज्यादा खुश थे। सोच रहे थे, आखिरी खरीदारी गुड़िया के चेहरे की मुस्कान और निखार देगी।

.... और फिर अगली सुबह गुड़िया अपने दादा जी की उंगली पकड़े स्कूल जा रही थी। उन्होंने गुड़िया की माँ को समझा लिया था। पीठ पर बस्ता लादे हुए गुड़िया बहुत खुश थी। अपनी आदत के अनुसार वह रास्ते में भी खूब बातें कर रही थी अचानक कहने लगी, ''दादा जी! मैं समझ गई कि मेरे पापा भी बिलकुल आपके जैसे ही होंगे, है न ?''

''वह कैसे ?'' दादा जी ने चौंक कर उल्टा सवाल कर डाला। लेकिन इस बार गुड़िया के जवाब ने दोबारा कुछ पूछने की गुंजाइश नहीं छोड़ी, ''देखो न दादा जी! अपने बच्चों की उंगले पकड़े सारे पापा बिल्कुल ऐसे ही दिख रहे हैं न, एकदम हमारी तरह? '' दादा जी का हृदय करुणा और ममता से भीगता चला गया। उन्होंने उसी क्षण गुड़िया को गोद लेने का निर्णय कर लिया था।

-सम्पर्क साहू सदन, अकोढ़िया रोड,
ऊंचाहार, जिला रायबरेली (उप्र) पिन-229404
मोबाइल 7007190413
aksahu2008@rediffmail-com

दोहे

-अनुज पांडेय

हमको आशाहीनता, कर देती है चूर।
नित ही खुशियों से हमें, रखती कोसों दूर।।

नाकामी के बाद तुम, फिर से करो प्रयास।
उद्यम तेरा एक दिन, देगा तुझे विकास।।

होकर कभी निराश तुम, फिर से भरना आस।
आगत हों जब आँधियाँ, होना नहीं उदास।।

भस्माने प्रति विघ्न को, पोषित कर ले आग।
पाने अपने ध्येय को, कर निद्रा का त्याग।।

साहस रख चलना डगर, होना नहीं निराश।
विपद से समर के लिए, हिय में भरना आश।।

हमारे सैनिक

हस्त में प्रतिपल हथियार लिए
राष्ट्र हेतु निः स्वार्थ प्यार लिए
वतन की रक्षा में लगे हुए
अरि हेतु पाण की धार लिए।

सैनिक राष्ट्र के प्रहरी, धीर- वीर
हृदय में रखते प्रस्तर की लकीर
वतन की माटी हेतु प्रत्येक क्षण
सहन कर लेंगे लाखों- कोटि पीर।

कक्षा -8,
पता- ग्राम-पड़ौली पोस्ट-ककरही
जिला-गोरखपुर
पिन कोड- 273408
मोबाइल नंबर- 8707065155
मेल एड्रेस- anooppandey-9621@gmail-com

दादी माँ

-मुस्कान

दादी माँ दादी माँ
मेरी प्यारी दादी माँ
रोज स्कूल के लिए तैयार करती
खाना बनाकर खिलाती है
दादी माँ ने कभी हमें रोने न दिया
हमेशा हँसते रहने को कहा
जब हमें किसी चीज की जरूरत होती
दादी बिन बोले ही पूरा कर देती
दादी माँ ने पाल पोसकर बड़ा किया है
प्यार से मिट्ठू कहकर नाम लिया है
दादी हमें रात को कहानी सुनाती
बड़े प्यार से उसकी सीख बताती
मेरी दादी लाखों में एक
बातें बताती अनेकों नेक
दादी माँ दादी माँ
मेरी प्यारी दादी माँ।

पेड़ -कशिश

पेड़ देखो कितने सारे
लगते मुझको प्यारे-प्यारे
ये देते हमें ऑक्सीजन
देते लकड़ियां और फल
उन फलों को खाकर हम
रहते फिट एंड फाइन
लेकिन इन्हें काट हम लेते मजा
पेड़ देते हमें बहुत कुछ
पर हम देते इनको सजा
हमको करना है इनका धन्यवाद
जिन्हें कर रहे हैं हम बरबाद।

कक्षा-सातवीं
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय छम्यार
तहसील बल्ह, जिला मण्डी,
हिमाचल प्रदेश-175027

मदगामी मद्धकंद

-श्रीमती रजनी शर्मा बस्तरिया

रंगसा ने अधखुली आँखों से देखा सुबह की चंपई आभा खिड़की के बाहर दिख रही थी और पक्षियों का बढ़ता कोलाहल संकेत दे रहा था कि बस अब पौ फटने ही वाली है। चिमनी को फूंक से बुझा कर दीवार में बने खोखे में वापस रख दिया उसने और उचटती हुई निगाहों से सोनाधर (उसके पति) की ओर देखा। ये तो अभी तक स्थानीय शराब के नशे में धुत्त है। भगवान जाने कब उठेगा?

उसके उठने-सोने से भला रंगसा को क्या फर्क पड़ना था। वह तो पुनः शराब के लिये ही अपने आप को खपायेगा। रंगसा ने दरवाजे के किवाड़ खोले। सामने बने कोठार में जाकर गाय के गले से रस्सी खोली, बकरियों को पुचकारा। मेन गेट में एक मोटी लकड़ी का गट्ठा जो बैरियर की शक्ल में था उसे हटाया। मुँह में दातुन, सिर पर गप्पा (बड़ी टोकनी) कमर में नक्खी (बड़ी एल्यूमिनियम की गगरी) को रख चल पड़ी तालाब की ओर। यह तो नित्य का काम था जो समय पर निपटाना ही था। अपने मरद से तो उसे रत्ती भर की सहायता की उम्मीद नहीं थी। ऊपर से आधा एकड़ जमीन पर आलू बोने के लिये लिया गया कर्ज भी चुकाना था।

गगरी को सी-सी की आवाज से माँज कर चमकाया। अब लगे हाथ (चांदी के कंगन) कंकनी को भी रगड़-रगड़ कर मांजा। यही एक मात्र तो जमा पूंजी थे जो उसकी कलाइयों में सही सलामत थे। जो उसकी आया (माँ) की आखिरी निशानी थी। वरना सब खिपड़ी माला, नागमोहरी उसके पति ने शराब की भेंट चढ़ा दिया था।

तालाब के पानी को एक बार बांयी, एक बार दांयी ओर उलीच कर बड़े ही कलात्मक ढंग से उसने नक्खी को पानी में डुबाया। गुड़-गुड़ की आवाज आती गई, बनते गये भंवर। कैसे गोल-गोल होने लगे और पल भर में पानी से नक्खी भर गयी। अब बांयें घुटने को जरा आगे करके उसके ऊपर पानी से भरी नक्खी को रखा। सिर पर रखी गुंडरी (कपड़े का घेरा) को सही तौर पर लगाया। अब बांयी हथेली नक्खी के तले के अतिरिक्त पानी को पीछे कर आया गो (माँ रे) के उच्चारण के साथ सिर पर गगरी को रख दिया।

यह तपस्या बस इतनी हो तो कोई बात हो। अब तो तालाब से घर की ओर की सीधी सपाट चढ़ाई करने की यात्रा तो उस मोरटपाल गाँव की बायले (महिलाओं) के लिये चारों धाम की यात्रा करने जैसी कठिन हुआ करती थी।

रंगसा ने जल्दी-जल्दी खेत की ओर कदम बढ़ाया कमर तोड़ मेहनत के बाद भी दो जून के भात के लिये मशक्कत करनी पड़ती थी। ऊपर से नमक, मिट्टी के तेल का खर्चा। कुल जमा पूंजी.... वो कभी भी उसके शराबी पति की निगाह से बच ही नहीं पाती थी।

चौदह वर्ष की उमर से पति की मार सहते-सहते पीठ तो अब पखना (पत्थर) बन चुकी थी। ऊपर से अभी भी वात्सल्य की भूमि बंजर ही थी। मृतवत्सा (बांझ) जो बन चुकी थी। ये यातना यहीं तक हो तब भी सहनीय था। पर सौत लाने की धमकी से तिल-तिल मरना भला दुनिया की कौन सी स्त्री को सुहाता होगा?

उसकी औलाद बस यही खेत का टुकड़ा थी, जिसमें उसने इस साल कर्ज लेकर आलू बोये थे। वह नहीं चाहती थी कि बस्तर की भूमि का यह टुकड़ा भी मृतवत्सा रह जाये, वह चाहती थी कि उसकी छाती से तो कम से कम हरियाली का दूध बहे। उसकी कोख से फसल उगे।

खेत में आलू के हरे नन्हे पौधे को देखकर वह खुद भी बच्चे की तरह किलक उठी। सूरज सिर पर तप रहा था, वह एक-एक करके पौधों के आस-पास मिट्टी चढ़ाती जाती। बिल्कुल वैसे ही जैसे किसी सगर्भा को खिलाया-पिलाया जाये, जिससे उसकी कोख का शिशु ठीक से पनपता रहे तंदुरुस्त रहे ।

कमर तोड़ मेहनत कर के जैसे ही घर पहुँची, आँगन में ही सोनाधर ने नशे में धुत्त होकर गालियों से उसकी मुँह दिखाई की। ''आज मौके चिंगड़ी रांधून देस।'' (आज मुझे छोटी मछलियाँ पका कर दे)।

''तुई काय कमाउन आनलीसीस'' (तू क्या कमा के लाया है।)

''चौप्प।'' लड़खड़ाते हुए सोनाधर वही आँगन में निढाल हो गया। अपनी किस्मत पर बिसूरने का वक्त ही कहाँ था रंगसा के पास? जल्दी से आग जलाकर उस पर बरतन चढ़ाया। मुठ्ठी भर चावल डालकर गंज पर पानी के साथ उबालेगी फिर मडिया (पावडर) घोल कर डालेगी तब जाकर तरल बनेगा। अकेले की कमाई से कौन सा छप्पन भोग जुटेगा भला।

रंगसा ने कुछ पैसे की जो बचत की थी उसे अंटी से निकाल कर कहाँ छुपाऊँ यह सोचने लगी। सोनाधर की नजर तो साक्षात् ''राडार'' को भी मात कर दे। उसने सोचा सारे रुपये वह ढ़ेकी (धान कूटने का स्थानीय घरेलू

यंत्र-ओखली) में छुपा कर रख देगी। और अब दोने-पत्तल बेच कर जितने भी पैसे बचेंगे वह उसी ढ़ेकी में भूमिस्थ करती जायेगी।

गाँव का कोतवाल मुनादी कर रहा था कि अगले इतवार का मंडई कौन से गाँव में आयोजित होगा। प्रौढ़ावस्था आने में देर थी पर, रंगसा के मन से नव यौवना वाली इच्छाओं ने घोर विपन्नता के बावजूद विदा नहीं कहा था। रंगसा का मन भी गमकने लगा। कुछ ज्यादा ही दोने-पत्तल तो मंडई में बिक ही जायेंगे। चार पैसे आ जायेंगे तो हफ्ते भर का नमक तो जुट ही जायेगा। बस्तर बालाओं को आज भी दूरस्थ अंचल में मात्र नमक के लिये मीलों चलना कोई नई बात नहीं है। पर ये नमक तो उनकी कर्मठता के दीर्घतपा होने का प्रमाण है साथ ही यह भी घोषणा करती है कि दुनिया का कोई भी नमक उनकी कर्मठता के पसीने से ज्यादा नमकीन नहीं हो सकता।

रंग बिरंगे फीते, प्लास्टिक की चूड़ियाँ, बजरिया नाच, पान, सल्फी का सुरूर, इमली के नीचे बैठा महिलाओं का समूह जो मध बेच रही है, रंगसा का मन उन प्लास्टिक की सतरंगी चूड़ियों को देखकर मचलने लगा था।

पान खाने को मन ललचा रहा था। बाजू में सवेती का मुनुख (पति) कैसे उसे दुलार कर कह रहा था।

''काय बीती धरुआस झाले झार (क्या चीज लेना है ले ले)।'' उसने उसके लिये पान भी लिया। पान की गिलोरी मुँह में दबाते ही अहा! कितनी सुंदर लुनाई। सेवती उसके पूरे वजूद पर छा गई। रंगसा के हाथ आनायास ही उसके खुद के ओंठ की ओर चल पड़े, कल रात की मार से फट कर सूज चुके थे। रंगसा की नजर चूड़ियों से हट ही नहीं रही थी, ''कितरो चो आसे?'' (कितने का है?)

''बीस रुपया।'' सुनकर रंगसा का दिल बैठ गया, उफ्फ ये पैसे खर्च हो जायेंगे तो आलू के खेत में खाद खरीदने की रकम कैसे जुटेगी। रंगसा ने अपना सिर झटक दिया। ऊंह! आलू सफेद-सफेद हीरे जैसे निकल कर बोरियों में भर-भर जब कर हाट में बिकेगी वह चार पाँच सौ रुपये तो कमा ही लेगी। तब खरीद लेगी चूड़ियाँ। नारी के मौलिक जायज श्रृंगारिक हक के लिये भी इतनी जद्दोजहद भरी विवशता की पीड़ा को रंगसा से भला बेहतर कौन जान सकता है?

पूरी मंडई में घूम-घूम कर बिना मुद्राराक्षस (पैसे) खर्च दिये रंगसा ने नयनसुख प्राप्त कर लिया। आखिर देखने में पैसे थोड़े ही लगते हैं।

आज सुबह रंगसा खेतों की ओर जल्दी ही दौड़ पड़ी पिछले हफ्ते भर से जमकर शीत पड़ रही थी। उसे मालूम था कि आलू की फसल और उस फसल के गर्भ में पल रहे नन्हें आलूओं के लिये यह शीत अच्छी नहीं है। पर वह करे तो क्या करे?

बहुत ज्यादा आत्म मंथन किया, फिर सोचा क्यों न पैरावट (सूखी धान के तने) को ही एक-दो गट्ठा खरीद कर आलू के पौधों के ऊपर बिछा देगी। सीधी शीत तो उन पौधों पर नहीं पड़ेगी और ये गलने से बच जायेगें। मन में दूना उत्साह भर कर उसने ढ़ेकी को खोला, साथ ही उसकी जान हलक में अटक गई। उसमें तो कुछ नहीं दिख रहा है। कहाँ गये मेरे सारे पैसे? हाथ पैर शिथिल, घोर निराशा। उसके पास आँसू थे पर वो अपमान, ठगे जाने, अपने खून पसीने की कमाई रकम के किसी के छीनने से उपजी व्यथा से सूख गये। उसका सारा बदन कांपने लगा। वह जान चुकी थी कि ये काम सिर्फ और सिर्फ सोनाधर का ही हो सकता है। किसी और का नहीं। वह बदहवास सी पलटी। हर जगह ढूंढा सोनाधर को। आँखों में आक्रोश लिये दहाड़ती पहुँची तो देखा गाय के कोठार में नशे में धुत्त सोनाधर कुछ छुपा रहा था।

''काय होली?'' (क्या हुआ) सोनाधर चीखा। रंगसा अवाक रह गई।

एक साथ इतनी सारी शराब की बोतलों को रंगसा कोटना (पशुओं के दाने खाने के पात्र) में छुपाने की कोशिश कर रहा था। बरसों से दबी यातना ने आक्रोश का साथ पकड़ा। रंगसा सारी शराब की बोतलों को झटकने लगी। सोनाधर ने लकड़ी से रंगसा को मारने की कोशिश की पर रंगसा अब रणचंडी बन चुकी थी। ''कितरो पिऊआस आले पी?'' (कितना पियेगा अब पी) बुदबुदाते सारी बोतलों को गप्पा (गगरी) में डालने लगी।

लड़खड़ाता सोनाधर मानो जोंक बन कर रंगसा से चिपका जा रहा था पर रंगसा के मन ने तो कुछ और ही ठान लिया था। अंधेरी रात में बोतलों को गप्पा (टोकनी) में भर कर वह खेतों की ओर दौड़ पड़ी। रोते-रोते आलू के सारे पौधों पर शराब उड़ेलती जा रही थी। क्या ऐसा प्रतिशोध किसी ने आज तक लिया होगा? जो बस्तर गाँव की निरक्षर मगर जीवट महिला ने अपने मदगामी पति से लिया। माटी से अर्जित कमाई को माटी में ही विसरित कर दिया।

116 सोनियाकुंज,
देशबंधु प्रेस के सामने रायपुर (छ.ग.)
मो. - 9301836811

संतुलन-शैलेश तिवारी

आईने के सामने खड़े होकर निहारा एक बार खुद को। सफेद पाजामा और उस पर रंगीन लंबा सा कुर्ता उसके इकहरे लेकिन बलिष्ठ जिस्म पर फब रहा था। गिरे हुए तापमान में भी खुद को ऊँचा उठाने में लिबास का भी अपना महत्व है। संदीप ने जाकेट पहनी और माथे पर लगे तिलक के गोले गुनिये चेक कर बाहर निकला। एक बार सर की चोटी को भी सीधे हाथ से सहला कर इत्मिनान किया उसके यथास्थान होने का।

हालांकि कार्यक्रम शुरू होने में अभी समय था पूरा एक घंटा, लेकिन बालसखा किशोर और उसके गायक साथियों के फिल्मी गानों के प्रोग्राम में वक्त से पहले पहुँच कर व्यवस्थाओं में हाथ बँटाना उसने परम कर्तव्य मान लिया। सर्द हवाओं की चुनोतियाँ स्वीकार करते हुए दस मिनट में ही कार्यक्रम स्थल पर बाइक को खड़ा कर दिया।

सांस्कृतिक भवन के हाल के बाहर ही एक आधुनिक वेशभूषा वाले आकर्षक व्यक्तित्व ने उसका ध्यान खींचा। जींस पर शानदार जैकेट पहने हुए जनाब का व्यक्तित्व चुंबकीय और असल उम्र को अंगूठा दिखा रहा था। संदीप सोचने लगा, पहले कभी इन्हें देखा नहीं। लेकिन उसके चेहरे का ओज और तेज बता रहा था कि भाई कुछ अलग ही है और वह जानता भी कैसे अभी तो गाँव से यहाँ शिफ्ट हुआ है। आते ही संगठन की बैठकों और अधिकारियों से मिलने मिलाने के साथ संगठन के महासचिव के उत्तरदायित्व को निभाने में वक्त कब बीत जाता इसका पता बिस्तर पर लेटते वक्त ही होता कि लो एक दिन और गुजर गया। आने वाले कल की रणनीति बनाते-बनाते सुबह ही नींद खुलती।

सामूहिक ठहाके की आवाज ने उस को फिर से सांस्कृतिक भवन के प्रांगण में ला खड़ा किया। हर आने जाने वाले से उसकी आत्मीयता से होती मुलाकात बता रही थी उसकी लोकप्रियता को। बराबरी वालों से गले मिलना बड़ों के चरण स्पर्श करना छोटे आते पैर पड़ने तो बाँह से पकड़कर गले लगा लेना उसकी नेतागिरी के गुणों का बयाँ करने को काफी थे। कालेज के युवाओं की खासी संख्या जमा थी उसके आसपास जो उसके हरफनमौला चरित्र की चुगली भी कर रही थी वह हैरान तो तब रह गया जब आने वाली किसी भी उम्र की महिला पूरी श्रद्धा के साथ उसके चरण स्पर्श करती सबसे हैप्पी न्यू ईयर का कहा जाने वाला उसका जुमला संदीप के दिल को हर बार अंदर तक घायल कर देता आखिर हम भारतीयों का नव वर्ष चैत्र शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा पर आता है, उस समय इनके मुँह में ताले लग जाते हैं। अभी देखो ईसवी सन् की बधाई कितने खुशी खुशी ली और दी जा रही है। इतने में ही संगठन के संयोजक और अध्यक्ष महोदय का चोपहिया वाहन अपने पूरे रुआब के साथ प्रवेश करता है। दोनों पदाधिकारियों की नजर उतरते ही उन महानुभाव पर पड़ती है वे उनकी तरफ ही बढ़ जाते हैं और उन महाशय के पैर छूने के लिए उनके घुटनों तक उनके हाथ जाते हैं। वो सज्जन उन्हें भी गले से लगाते हैं। संदीप भी लपक कर वहीं पहुँच जाता है। पदाधिकारी परिचय उनका कराते हैं। ''भाई साहब यह संदीप जी हैं, संगठन के महासचिव अभी गाँव सेमरा से यहाँ शिफ्ट हुए हैं। संगठन का दायित्व निभाने के लिए।'' उन महोदय ने गर्मजोशी से संदीप का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा, ''आपका नगर में स्वागत है। जो अगली बात उनके मुँह से निकली उस बात ने संदीप को काफी आश्चर्यचकित कर दिया। उन्होंने कहा, ''संदीप जी! वह बात पूछ लीजिये जो आप बहुत देर से पूछना चाह रहे हैं।'' यह था वो अचरज कि इन्होंने कैसे जाना कि वह इनसे कोई सवाल करना चाहता है? ये कैसे जाना इनकी ये जाने संदीप को तो मुँह मांगी मुराद मिल गई थी जैसे। अब तक भीड़ हाल में प्रवेश कर चुकी थी इक्का दुक्का से लोग ही बाहर थे। उन्होंने अपना स्नेह भरा हाथ संदीप के कंधे पर रखा और मुख्य धारा से कुछ पीछे हटा कर खुद ही ले गए।

उसने भी अपने अंदर काले काले मेघों की तरह के उमड़ घुमड़ रहे सवाल को उनकी तरफ उछाल दिया ''आप जैसा व्यक्तित्व भी अगर आंग्ल वर्ष की बधाई देगा भाईसाहब तो हमारी संस्कृति का मटियामेट हो जाना तय है।" उनके चेहरे की गहरी मुस्कान ने उसे भी अपनी गिरफ्त में लेने का प्रयास किया लेकिन वह केवल जवाब सुनना चाहता था और अपनी संस्कृति के प्रति उनके मन में भाव जगाना चाहता था हाल के अंदर के प्रोग्राम से ज्यादा जरूरी उसे ये लग रहा था।

वे कुछ देर के लिए खामोश होकर शून्य को ताकने लगे। अब तक उसके अंदर के अहंकार ने जीत जाने की कगार पर खड़े विजेता की तरह अपनी अंगड़ाई ले ली थी।

तभी उनके मुख से सवाल निकला ''आज तारीख क्या है?'' संदीप ने कहा, ''31 दिसंबर।''

''सन् कौन सा है?'' अगला जवाब था, ''2019।'' संदीप उलझन में था सवाल का जवाब सवाल क्यों किया जा रहा है। तभी अगला सवाल आया, ''आज किस भारतीय माह

की कौन सी तिथि है?'' उनके इस प्रश्न ने तो निरुत्तर ही कर दिया। संदीप के कंधे को सहलाते हुए वे बोले, ''आज पौष शुक्ल पक्ष की उदया तिथि पंचमी है। विक्रम संवत 2076 शालि वाहन शक संवत 1941।'' उनकी जानकारी ने संदीप को कुछ पशोपेश में डाल दिया था। उसके अंदर का शुरुआती विजेता अब हार महसूस कर रहा था। तभी उनकी धीर गंभीर आवाज सुनाई दी, ''संदीप जी आपके पास संस्कृति का सिद्धांत तो है, लेकिन व्यवहार में आंग्ल कैलेंडर ही है। यही हमारी चूक है। हमारे सिद्धांत और व्यवहार में भिन्नता है। जब तक दोनों में संतुलन नहीं होगा तब तक हम ज्ञान और विज्ञान के पक्ष या विपक्ष में उलझे रहेंगे। हमारे कदम उस प्रज्ञान की तरफ नहीं बढ़ पाएंगे जो संस्कृति के ज्ञान को सहेजना और विज्ञान को अपनाने के साथ उन्नति की तरफ ले जाते हैं। हम एक ही तरह से न सोचें, विचारों को व्यापकता के साथ अपनाने की जरूरत है आज की। अब उसको समझ आ रहा था इनका लोकप्रिय होने का राज। आधुनिक वेश भूषा और पारंपरिक सांस्कृतिक ज्ञान का अनूठा संगम देख रहा था संदीप।

पोस्ट ऑफिस के पास
मंडी, सीहोर-466001

दावानल –दीपक पाँडे

मई का प्रथम सप्ताह, वन विभाग की उच्च स्तरीय बैठक, मुद्दा गम्भीर था। हर बार की तरह पर्यावरण दिवस पर वृक्षारोपण हेतु करोड़ों की राशि अबकी बार नहीं आयी थी। इतने वृक्षारोपण के बावजूद केन्द्र सरकार द्वारा सैटेलाइट के सर्वेक्षण में वनों का क्षेत्रफल कम पाया गया। मामले की गम्भीरता को देखते हुए आलाकमान ने जाँच के आदेश दिये हैं। गोष्ठी में गम्भीर चिन्तन के बाद कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये। मई दूसरे सप्ताह के समाचारपत्रों के मुखपृष्ठ पर बस एक ही घटना छायी थी। 'ग्रीष्मकालीन दावानल में करोड़ों हेक्टेयर वन स्वाहा।' मई तीसरे सप्ताह प्रदेश के वन विभाग की आपातकालीन बैठक। पर्यावरण दिवस पर पौधारोपण हेतु करोड़ों की रकम आ चुकी थी तुरन्त युद्धस्तर पर प्रयास जरूरी थे। केन्द्र सरकार द्वारा गठित जाँच समिति भंग कर दी गयी थी।

जवाहर नवोदय विद्यालय
सुयालबाडी नैनीताल-263135
मो.9412902607

नि:शक्त घुटने–कुणाल शर्मा

''बेटे, तेरा इंटरव्यू ज्यादा जरूरी है, डॉक्टर को तो मैं अगले हफ्ते भी दिखा लूँगा।'' पिताजी उसे समझा रहे थे।

''लेकिन पिताजी, आपके घुटनों का दर्द भी तो बढ़ता जा रहा है।''

''बेटा, तू फिक्र ना कर। तू बस अपने इंटरव्यू की सोच। भगवान ने चाहा तो आज....।''

पिताजी के आग्रह पर डॉक्टर से ली अपॉइंटमेंट कैंसिल कर वह इंटरव्यू ऑफिस को निकल पड़ा। काफी अरसे से वह नौकरी की तलाश में जुटा था, पर हर बार निराशा ही हाथ लग रही थी। पिताजी की रिटायरमेंट के बाद घर की आर्थिक स्थिति भी चरमरा गई थी। इंटरव्यू ऑफिस में दोपहर बाद उसका नम्बर आया। पर आज भी वह रिजेक्ट हो गया था।

खिन्न मन से वह घर को चल दिया। उसे लगा कि पिताजी के घुटनों का दर्द उसके घुटनों में जगह बनाता जा रहा है। बेजान हो चुकी टाँगों के सहारे घिसटता-सा वह थका-हारा घर पहुँचा। उसके चेहरे पर उड़ती हवाइयाँ भाँपकर माँ और पिताजी ने चुप्पी ओढ़ ली।

रात को बिना कुछ खाये-पिये वह बिस्तर पर लेट गया। नींद उसकी आँखों से कोसों दूर थी। दीवार पर लटकी घड़ी दो बजा रही थी। भरे मन से वह बिस्तर पर करवटें बदलता रहा। जिंदगी उसे बोझिल लगने लगी थी।

चित्त लेटा तो छत पर झूलता पंखा उसे अपनी ओर खींचता-सा लगा। रस्सी लाने के लिए वह बिस्तर से उठकर बाहर आ गया। बगल वाले कमरे में बत्ती जलती देख उसने अंदर झाँका। दर्द से परेशान पिताजी घुटनों को मुट्ठियों में जकड़ पीठ झुकाये बैठे थे। बार-बार उठ रहे खाँसी के धसके को दबाती-सी माँ पास में ही बिछी चारपाई पर लेटी थी।

उसके शरीर में एक झुरझुरी-सी दौड़ गई। कुछ देर पहले उपजे विचार का ख्याल उसे ऊपर से नीचे तक हिला गया। माथे पर पसीने की बूँदें चुहचुहा आईं। वापिस अपने कमरे में आकर उसने पानी के दो गिलास गटके। फिर घूमकर पिताजी के कमरे में गया और उनके सामने बैठ घुटने दबाने लगा।

137, पटेल नगर (जण्डली)
अम्बाला शहर-134003 हरियाणा
मो. 8059781234 9728077749
ईमेल. kunaladiti0001@gmail-com

रुका हुआ पंखा–बलराम अग्रवाल

पापा बड़े उद्विग्न दिखा दे रहे थे कुछ दिनों से। कमरे में झाँककर देखते और चले जाते। उस उद्विग्नता में ही एक दिन पास आ खड़े हुए पूछा, ''बेटी, ये पंखा क्यों बन्द किया हुआ है?"

''ठंड के मौसम में कौन पंखा चलाता है पापा!'' मैंने जवाब दिया।

''हाँ, लेकिन मच्छर वगैरा से तो बचाव करता ही है।'' वह बोले, ''ऐसा कर, दो नम्बर पर चला लिया कर।''

''उन्हीं की वजह से पूरी बाँहों की कमीज, टखनों तक सलवार और पैरों में मौजे पहनकर पढ़ने बैठती हूँ।'' मैंने समझदारी जताते हुए कहा, ''ये देखो।''

''फिर भी'' पंखा ऑन कर रेग्युलेटर को दो नम्बर पर घुमाकर बोले, ''मन्दा-मन्दा चलते रहना चाहिए।'' उस दिन से कन्धों पर शॉल भी डालकर बैठने लगी। आज आए तो बड़े खुश थे। बोले, ''तेरे कमरे के लिए स्प्लिट एसी खरीद लिया है। कुछ ही देर में फिट कर जाएगा मैकेनिक। पंखे से छुट्टी।''

''ऑफ सीजन रिबेट मिल गयी क्या?'' मैंने मुस्कराकर सवाल किया।

''जरूरत हो तो क्या ऑफ सीजन और क्या रिबेट बेटी।'' उन्होंने कहा, ''खरीद लाया, बस।''

उसी समय एसी की डिलीवरी आ गयी और साथ में मैकेनिक भी। दो-तीन घंटे की कवायद के बाद कमरे की दीवार पर एसी फिट हो गया।

''एक काम और कर दे मकबूल!'' पापा मैकेनिक से बोले, ''सीलिंग फैन को उतारकर बाहर रख दे।''

''उसे लगा रहने दो सा'ब।'' मकबूल ने कहा, ''एसी के बावजूद इसकी जरूरत पड़ जाती है।''

''जरूरत को मार गोली यार!'' पापा उससे बोले, ''इसे हटाने के लिए ही तो एसी खरीदा है।''

''क्यों?'

''आजकल के बच्चों का कुछ भरोसा नहीं है, पता नहीं किस बात पर!'' कहते-कहते उनकी नज़र मेरी नज़र से टकरा गयी। तो यह बात थी!!! यह सुन, एकाएक ही मेरी आँखें उन्हें देखते हुए डबडबा आईं।

''जिगर का टुकड़ा है तू।'' तुरन्त ही खींचकर मुझे सीने से लगा वह एकदम सुबक-से पड़े, ''चारों ओर से आने वाली गरम हवाओं ने भीतर तक झुलसाकर रख दिया है बेटी। रुका हुआ पंखा बहुत डराने लगा था।''

मकबूल ने उनसे अब कुछ भी पूछने-कहने की जरूरत नहीं समझी। अपने औजार समेटे और बाहर निकल गया।

balram.agarwal1152@gmail.com

रिजेक्ट –गोविंद शर्मा

कार्यकर्ताओं की भरती होनी थी। पार्टी के भारी भरकम नेता इन्टरव्यू लेने के लिये बैठे थे। कई आये, कुछ चुने गये, कुछ नहीं। वह भी पहुँच गया। उसे देखकर नाक भौंह सिकोड़ी गई। एक ने पूछा - ''तुम कार्यकर्ता क्यों बनना चाहते हो?''

''रोटी के लिये। मुझे कभी काम मिलता है, कभी नहीं। कई दिन निकल जाते हैं भूखा रहते। सोचा यह नौकरी मिल जाये तो......।''

नेताओं ने एक दूसरे को देखा। कुछ ने नहीं में गर्दन हिला दी। पर एक बोला- यह काम देगा। हमें धरने के साथ-साथ भूख हड़ताल पर भी अपने कार्यकर्ता बैठाने होते हैं। इसको अच्छा अनुभव है। यह कई दिन भूखा रह सकता है।

पर उसका चयन नहीं हुआ। उसके बाहर जाने पर एक बोला - इसे भूखा रहने की आदत है। अब इसमें जितना वजन है, उससे और क्या कम होगा। इसे अस्पताल ले जाने के लिये भी बहाना नहीं मिलेगा। इसे 'कुछ और' भी जल्दी नहीं होगा।

इससे ढंग की खबर नहीं बनेगी। इस काम के लिये किसी खाते-पीते की भर्ती करें..........।

ग्रामोत्थान विद्यापीठ, संगरिया-335063
मो. 09414482280
ई मेल- gosh1945@rediffmail-com

शिवसागर –कुहेली भट्टाचार्जी

ऐतिहासिक जगहों के बारे में पढ़ना, उनके बारे में जानना और उन्हें देखना लोगों को काफी पसंद होता है। आज हम आपको असम की ऐतिहासिक विरासत के बारे में बताएँगे, जो गुवाहाटी से 360 की किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इस जगह को शिवसागर कहा जाता है, जहाँ आज भी अहोम राजाओं की निशानियाँ बिखरी हुई हैं।

ब्रह्मपुत्र की सहायक नदी दिखू के किनारे बसा यह स्थान अपनी कुदरती खूबसूरती के बावजूद आज भी अनछुआ है। यहाँ पर्यटकों की ज्यदा भीड़ नहीं आती है। लेकिन देश से जुड़ी विरासतों व संस्कृति को जानने-समझने के लिये यह जगह काफी उचित है। शिवसागर काफी साफ-सुथरा और प्राकृतिक सुंदरता से सजा हुआ है, जहाँ की अनमोल विरासतों को देखना और यहाँ की प्रकृति का आनंद लेना अपने आप में ही काफी खास होता है।

शिवसागर जिले का नाम इसी जलाशय के नाम पर पड़ा है। जो कि 129 एकड़ भूमि पर फैला हुआ है। लोग यहाँ सैर करने के लिए नौका विहार का सहारा भी लेते हैं। सर्दियों में यहाँ पर आने वाले लोग शिवसागर में प्रवासी पक्षियों के जमावड़े को भी देख अपना ज्ञान भी बढ़ा सकते हैं। अपनी प्राकृतिक खूबसूरती के कारण यह जगह फोटोग्राफी के लिये भी उपयुक्त है।

शिवसागर के अलावा यहाँ स्थित जयसागर सरोवर सबसे बड़ा कृत्रिम सरोवर है। जिसे अहोम राजा स्वर्गदेव रुद्र सिंह द्वारा बनवाया गया था। इसे रुद्र सिंह ने अपनी माता जयमती की याद में तैयार करवाया था। जिसके उत्तरी छोर पर राजा ने तीन मंदिर भी बनवाए हैं। जिनमें जयदोल या केशवनारायण विष्णु दोल की खासी चर्चा होती है। इस मंदिर में भगवान विष्णु के अनेक अवतारों की प्रतिमाएँ भी मौजूद हैं।

ब्रह्मपुत्र की सहायक नदी दिखू के किनारे बसा यह स्थान अपनी कुदरती खूबसूरती के बावजूद आज भी अनछुआ है। यहाँ पर्यटकों की ज्यदा भीड़ नहीं आती लेकिन देश से जुड़ी विरासतों व संस्कृति को जानने-समझने के लिये यह जगह काफी उचित है। शिवसागर काफी साफ-सुथरा और प्राकृतिक सुंदरता से सजा हुआ है, जहाँ की अनमोल विरासतों को देखना और यहाँ की प्रकृति का आनंद लेना अपने आप में ही काफी महत्वपूर्ण होता है।

करीब छः सौ साल पुराना ये शहर जिसे शिवसागर कहा जाता है। आसाम के सबसे सुन्दर शहरों में से एक है। यह शहर अहूम राजाओं के समय में सबसे सुन्दर और प्यारे शहर के रूप में जाना जाता था और आज भी जाना जाता है। पूरा शहर मंदिर, झील, पेड़-पौधों से सजा हुआ है। जिन-जिन इमारतों की वजह से इस शहर को विशेषता प्राप्त हुई है वो हैं-

शिव देओल, विष्णु देओल, देवी देओल (यह मातृ देओल है आसाम में माता की पीठ बड़े ही सम्मान के साथ पूजित होती है। कामरूप कामाख्या का नाम सभी भारत वासी जानते हैं। शिव, विष्णु के साथ-साथ माता जगन्मई दुर्गा या अन्नपूर्णा का पूजन आसामवासी बड़ी ही श्रद्धा के साथ करते हैं।)

आहूम राजाओं के द्वारा बनवाया हुआ 'रंग घर', करेंग घर, भण्डार भवन, इत्यादि, देखने योग्य स्थान हैं।

शिव देओल– यह शिवजी का एक भव्य मंदिर है। यह मंदिर अत्यंत प्राचीन मंदिर है। मंदिर प्रांगण बहुत बड़ा है जहाँ बैठकर आज भी भक्त जन प्रार्थना करते हैं। शिव

वंदना करते हैं, भजन इत्यादि गाते हैं। ढोल, नगारे के साथ शिवजी की आरती करते हैं। सुबह चार बजे शिवलिंग को नहलाया जाता है। उसके बाद पूजन और आरती होती है। क्योंकि आसाम पूर्वोत्तर प्रान्तीय प्रदेश है इसलिए सूर्योदय बहुत जल्दी हो जाता है। लोग चार से पाँच बजे तक जाग जाते हैं। शिव देओल के पीछे बहुत बड़ी और सुन्दर झील है। पौराणिक गाथा के अनुसार इस झील में शिवजी नहाते थे।

इसलिए इस झील का नाम शिवसागर पड़ा और इसी झील के नाम के अनुसार उस शहर का नाम भी शिवसागर ही पड़ गया। शिव देओल के साथ साथ ही एक तरफ विष्णु देओल और एक तरफ मातृ देओल यानि कि माता अन्नपूर्णा का मंदिर है।

विष्णु देओल -शाक्त धर्म यानि कि शक्ति पूजन, वैष्णव धर्म यानी कि विष्णु पूजन। दोनों आसाम में साथ साथ चलते हैं। शंकर देव के समय में वैष्णव धारा आसाम में प्रेम की धारा बनकर बह गई थी। इसी वजह से शक्ति पूजा के

साथ साथ विष्णु पूजा भी चलती आ रही है। आहूम राजवंशज कला के पुजारी थे, इसलिए हर इमारत, हर मन्दिर में उनकी कला के निशान प्रदर्शित हैं।

आसाम के किसी भी प्रान्त में वैष्णव धर्म का निदर्शन नहीं मिले ऐसा हो ही नहीं सकता और इसका मुख्य कारण है शंकर देव।

शंकर देव आसाम के एक युग पुरुष थे। जिनको हम एक सांस्कृतिक पितामाह कह सकते हैं। बरगीत शंकर देव और माधव देव दोनों की ही रचनाओं की फसल है जिसने असमिया सभ्यता और असमिया संस्कृति को एक विशाल परम्परा दी है। इसमें भक्ति गीतों की वर्षा है। भक्ति भाव की मूर्छना है, नियम निष्ठा है। इन गीतों में कृष्ण भगवान जी को आकुल होकर भक्त बुलाते हैं, उनकी आरती उतारते हैं, उनके रूपों का वर्णन करते हैं। विष्णु देओल में आज भी शंकर देव के बरगीत से ही विष्णु भगवान का पूजन होता है। साथ-साथ नृत्य भी प्रदर्शित होता है। इस प्रकार के नृत्य को, जो भक्तजन विष्णु भगवान को खुश करने के लिये आत्मसमर्पण की भावना से विभोर होकर गाते जाते हैं।

रंग घर

विष्णु का गुणगाण करते हैं। साथ-साथ नृत्य मुद्रा में उस भाव को भी प्रकट करते हैं। इस नृत्य को क्षत्रिय नृत्य कहा जाता है। यह नृत्य कभी केवल पुरुष वर्ग तक ही सीमित था। मंदिर के पुजारी या कोई भी भक्त जो पुरुष है वह मन्दिर प्रांगण में क्षत्रिय नृत्य करते थे। क्योंकि यह नृत्य कला अपने आप में अपूर्व है, इसलिए क्लासिकल नृत्यों में इसको स्थान मिलना चाहिए जो अभी तक स्वीकृत नहीं है। आसाम के कला प्रेमियों के लिये यह एक दुखद कहानी है, क्लासिकल नृत्य का सर्वगुण सम्पन्न क्षत्रिय नृत्य को अपना स्थान अभी तक प्राप्त नहीं है।

फिलहाल हम चलते हैं शिव देओल, विष्णु देओल और मातृ मन्दिर में। शिव अभिषेक के साथ माता को भी भोग

चढ़ाया जाता है और विष्णु जी को भी भोग चढ़ाया जाता है। आरती भी एक ही समय पर शुरू और खत्म होती है। सालों से तालमेल के साथ यह चला आ रहा है। शहर के बीचों बीच हैं ये शिव देओल, विष्णु देओल, मातृ मन्दिर और शिव सागर।

अब हम चलते हैं दो तीन किलोमीटर दूर जहाँ बसे थे कभी आहूम राजाओं के राज। उन्होंने अपने आनन्द और समृद्धि के सब साधन जुटा कर रखे हुये थे। स्थापत्य के भग्नावशेष देख कर ही उस समय के झिलमिलाते ऐश्वर्य का पता चलता है।

रंगघर –यह 1745 से 55 के बीच में स्वर्ग देओल प्रमत्य सिंह के द्वारा बनवाया गया है।विस्तीर्ण प्रखण्ड लेकर रंग घर की आलीशान इमारत खड़ी है। इस रंग घर में आहूम राजाओं के लिए नाना प्रकार के आनन्द का आयोजन किया जाता था। कभी भैंसों की लड़ाई, कभी सांडों की लड़ाई, कभी नाच गाना इत्यादि आनन्ददायी कार्यक्रम हरदम हुआ करते थे। यह आहूम राजा कलाप्रेमी थे। उनकी कला का निदर्शन जगह-जगह देखने को मिलता है। रंग महल की बनावट ऐसी है कि वहाँ पर बैठने वाले लोगों को हवा की कमी नहीं होती। गर्मियों में भी उनके लिए आराम का बंदोबस्त पूरा-पूरा था। यह हवादार महल बनाने में जिन कलाकारों की बुद्धि का प्रयोग किया गया होगा, आधुनिक जगत में ऐसे कारीगर या उनकी शैली कहीं भी देखने को नहीं मिल सकती है। गोलाई ढांचे में बनी हुई यह विशाल इमारत अद्भुत कला की परिचयायक है। यह कहा जा सकता है उस समय का आर्कीटेक्चर कला की बुलंदी को छू चुका था। उसी का ही एक निदर्शन है यह रंगघर। रंगघर से थोड़ी ही दूरी पर है भण्डार घर। जहाँ आहूम राजाओं के समय अनाज जमा करके रखा जाता था और साल भर उसी से ही राज महल की रसोई चलती थी। भण्डार घर को एक तरफ रखकर हम अगर बायें मुड़ जायें और कुछ दूर तक चलते रहें तो हम करेंग घर पर पहुँच जायेंगे।

करेंग घर–उस जमाने की दो मंजिला अट्टालिका। यह एक स्थापत्यकला का सुन्दर निदर्शन है। इतने सालों में भी इसकी नींव को समय की थपेड़ों ने छुआ तक नहीं और निडर निर्भीक सुन्दर यह स्थाप्त्य प्राचीन भवन, इतिहास को सीने में लेकर चीख-चीख कर आहूम राजाओं का जय गान कर रहा है। बेशक सालों निकल गये हैं, समय के स्रोत इनके उपर से कितने ही बह गये हों फिर भी इसे काबू में नहीं कर पाये। छत पर खड़े होकर आज भी करेंग घर को प्रत्यक्ष किया जाये तो दोनों तरफ के बगीचे नजर आ सकते हैं। उस समय जब आहूम राजा यहाँ राज करते थे न जाने कैसे उन्होंने इस जगह को फूलों से पौधों से सजाया होगा। आसाम की मिट्टी वैसे भी उर्वर है। हरियाली तो इसके रूप को चार चाँद लगाती ही है और करेंग घर की इन इमारतों को, जो कि राजाओं को रहने के लिए, विचार करने के लिए कोई भी निर्णय लेने के लिए अलग अलग जगह बनाई गई थी और उन्होंने इसे जी भरकर सजाया भी था। आज भी हम यह एहसास कर सकते हैं उस समय यह स्थान कितना सुन्दर लगता होगा। करेंग घर के सिंहद्वार से अंदर आते समय दायीं तरफ दो बड़ी-बड़ी तोपें आज भी नजर आती हैं। उन्हें आसाम सरकार ने अत्यंत प्यार के साथ संभालकर रखा हुआ है। ताकि बाहर से यात्री आयें तो इसे देख सकें जोकि लगभग साढ़े चार सौ साल पहले आहूम राजा कभी इस्तेमाल किया करते थे।

देखा जाए तो सम्पूर्ण शिव सागर ही यात्रियों के लिए एक आकर्षक स्थल है। आसाम सरकार अगर इस पर और थोड़ा ध्यान दे, यातायात की सुविधा की तरफ ध्यान दे तो यात्रियों की नजर इस पर पड़ सकती है।

गोहाटी और डिबरूगढ़ दोनों तरफ से ही इस जगह पर पहुँचा जा सकता है। गुवाहाटी से बस लेकर जोरहाट होकर शिवसागर पहुँचा जा सकता है और डिबरूगढ़ से भी सीधी बस पहुँचती है इस प्राचीन शहर में। शिवसागर हवाई जहाज से भी देश के अन्य प्रान्त से जुड़ा हुआ है। एक प्राचीन इतिहास के प्रतिनिधि बनकर यह शहर आज भी ऐश्वर्य का वर्णन कर रहा है। यह एक उत्कृष्ट पर्यटन स्थल है।

भावों की सशक्त अभिव्यक्ति, भाषा का सरल प्रवाह - डॉ. सीमा शर्मा

कहानी संग्रह- खिड़कियों से झाँकती आँखें
लेखिकाः -सुधा ओम ढींगरा
प्रकाशनः शिवना प्रकाशन,
पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स,
बेसमेंट, सीहोर, मप्र-466001,
दूरभाष- 07562405545
प्रकाशन वर्ष - 2020,
मूल्य -150 रुपये,
पृष्ठ - 132

'खिड़कियों से झाँकती आँखें' सुधा ओम ढींगरा का सातवाँ कहानी संग्रह है। इन सभी कहानी संग्रहों को पढ़ने के बाद स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि आपकी कहानियाँ भारत और अमेरिका के बीच एक ऐसे पुल का निर्माण करती हैं, जिस पर चलकर आप इन दोनों देशों के सामाजिक और सांस्कृतिक ताने-बाने बहुत बारीकी से समझ सकते हैं। आप चीज़ों को व्यापक परिदृश्य में देखते हैं और इस प्रक्रिया में आपके कई पूर्वाग्रह ध्वस्त हो जाते हैं। यह प्रक्रिया किसी एक कहानी में नहीं बल्कि कहानी-दर-कहानी चलती रहती है। समीक्ष्य संग्रह की पहली कहानी 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' से लेकर अंतिम कहानी 'एक नई दिशा' तक आते-आते आपकी धारणा और अधिक पक्की होती जाती है।

संग्रह की प्रतिनिधि और प्रथम कहानी 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' अत्यंत संवेदनशील है। इस कहानी में 'आँखें' प्रतीक हैं, उन वृद्धों की, जिनकी संताने सफलता की राह पर आगे बढ़ गईं और ये बहुत पीछे छूट गए। अब ये 'आँखें' स्नेह एवं प्रेम की एक किरण जहाँ दिखाई दे उसी से चिपक जाना चाहती हैं, लेकिन यही 'आँखें' कथा नायक डॉ. मलिक को असहज कर देती हैं क्योंकि वह इनकी सच्चाई नहीं जानता। डॉ. खान उसे इनकी सच्चाई बताते हुए कहता है -''यंग मैन, इन आँखों से डरने की ज़रूरत नहीं, इनको दोस्ती का चश्मा चाहिए, पहना दो, चिपकना बंद कर देंगी।"

इस कहानी में कई आयाम हैं। एक ओर अपनी जड़ों से कटकर स्वयं को कहीं और स्थापित करना। अपनी जड़ें ज़माने और वहीं रच-बस जाने के बाद आप ही की तरह आपकी अगली पीढ़ी कहीं किसी देश में अपनी दुनिया बसा लेती है। अब आप नितांत अकेले हो जाते हैं, इसलिए एक बार पुनः अपने देश लौटने की चाह उत्पन्न होना स्वाभाविक है लेकिन तब वहाँ आपके पास कोई स्थान शेष नहीं रह जाता।

सुधा ओम ढींगरा की कहानियों में यह बात बार-बार उभर कर सामने आती है कि स्वदेश में रहने से सब बहुत अच्छे और विदेश में रहने से बुरे नहीं बन जाते। दूसरी कहानी 'वसूली' में ऐसे ही एक विषय को उठाया गया है। कहानी सत्तर के दशक से नब्बे के दशक तक जाती है, इसमें लेखिका ने हरि और सुलभा के माध्यम से दिखाने का प्रयास किया है कि प्रवासी भारतीय (अपनी भारतीयता, देश और परिवार से कितना लगाव रखते हैं, जबकि भारत में रहने वाले कितने भारतीय ऐसे हैं जिन के लिए उनका स्वार्थ सर्वोपरि है।

हरि भारत में जन्मा, छह भाई-बहनों के बीच अत्यंत गरीबी में पला-बढ़ा। बहुत मेहनत करके पढ़ाई की संभवतः इसलिए उसका व्यक्तित्व एक भावुक और उदार व्यक्ति के रूप में निर्मित हुआ जबकि उन्हीं परिस्थितियों के बीच पले-बढ़े उसके बड़े भाई शंकर का व्यक्तित्व ठीक उलट दिखा देता है। शंकर के व्यवहार का असर उसके समूचे परिवार पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। वह बेटा जो सारे विश्व को अपना परिवार समझता था, अब सबको अलग कैसे समझने लगा।

यह कहानी वैसे तो सम्पति के लालच में एक परिवार के बिखराव की कहानी है लेकिन इसके छोटे से कथ्य में व्यापक गहराई है। तीसरी कहानी 'एक ग़लत कदम' वद्धाश्रम और परिचर्यागृह के एक दृश्य के साथ शुरू होती है जहाँ दयानंद शुक्ला एवं शकुंतला शुक्ला को उनके दो पुत्र और पुत्र वधुओं ने यहाँ तक पहुँचाया है। यह 'एडल्ट लिविंग एंड नर्सिंग होम' लिखित रूप में तो सबके लिए है लेकिन अघोषित रूप से यह केवल भारतीयों के लिए है और इसमें सूक्ष्म भारत की झलक मिलती है। सारे डॉक्टर, नर्स, सेवक-सेविकाएँ और कर्मचारी

भारतीय हैं। हर गृह में एक मंदिर भी होता है। हर प्रदेश का भारतीय भोजन यहाँ दिया जाता है और भारतीय माहौल उत्पन्न किया जाता है। अप्रवासी भारतीयों के अंदर जो भारत बसता है, वद्धाश्रम उसी का प्रतिबिम्ब है। यह उन लोगों का आश्रय स्थल बन जाता है जो किन्हीं कारणों से भारत नहीं जा पाते और अपने परिवार के साथ भी नहीं रह पाते। सभी सुख-सुविधाओं से सम्पन्न यह वद्धाश्रम भारतीय बुजुर्गों में बहुत लोकप्रिय है। यह एक ऐसा स्थल है जहाँ उन्हें अहसास हो कि वे भारत में ही रह रहे हैं। इस अहसास से उन्हें सुख की अनुभूति होती है। यह कहानी एक ओर सजातीय और विजातीय होने के भ्रम को तोड़ती है और इस तथ्य को स्थापित करती है कि अच्छे-बुरे लोग देश-विदेश सब जगह होते हैं और अपवाद कहीं भी हो सकते हैं। डॉ.शरद शुक्ला और डॉ. जैनेट शुक्ला जैसे पात्रों के माध्यम से लेखिका ने कई पूर्वाग्रहों को तोड़ने का कार्य किया है। इस कहनी में उन्होंने इस धारणा को भी ध्वस्त किया है कि यूरोपीय देशों में संयुक्त परिवार नहीं होते या उनके बीच वैसी परवाह, स्नेह और सामंजस्य नहीं होता जैसा कि भारत में।

सुधा ओम ढींगरा ने 'ऐसा भी होता है' कहानी में ऐसे विषय को उठाया है जिस पर हम या तो ध्यान नहीं देते या देना नहीं चाहते। समाज में दहेज़ की समस्या पर खूब बात होती है लेकिन लेखिका ने समीक्ष्य कहानी में इससे ठीक विपरीत एक विषय को उठाया है। कहानी पत्रात्मक शैली में लिखी गयी है। इसकी मुख्य पात्र दलजीत कौर के माध्यम से लेखका ने उन सभी स्त्रियों की पीड़ा को शब्द दिये हैं, जो अपना 'मायका' (एक ऐसा घर जो सामान्यतया उनका होता ही नहीं) बचाने के लिए अपनी सामर्थ्य से अधिक प्रयास करती हैं लेकिन अंततः उन्हें निराशा ही हाथ लगती है। कहानी भले विदेश में बसी बेटी को लेकर बुनी गयी है लेकिन यह समस्या सार्वदेशिक कही जा सकती है।

मायके की निरंतर मदद करने वाली 'दलजीत' का एक बार उनकी मदद न कर पाना (वह भी जानबूझकर नहीं, वरन उसके घर से आये एक पत्र के न मिल पाने के कारण। लेकिन यही कारण उसके मोहभंग का भी है। लेखिका ने 'दलजीत' के पिता के रूप में एक ऐसे पात्र को गढ़ा है जिनके लिए बेटियाँ उनके सपनों को पूरा करने का माध्यम मात्र हैं। 'दलजीत' की पीड़ा के माध्यम से लेखिका ने उस समूचे वर्ग पर व्यंग्य किया है, जो अपनी बेटियों को परदेश में केवल इसलिए ब्याहते हैं कि उनके सपने पूरे हो सकें।

'कॉस्मिक की कस्टडी' कहानी की कथावस्तु की बात की जाये तो दो पंक्तियों में आ सकती है। माँ (मिसेज रॉबर्ट) और बेटे ग्रेग कॉस्मिक की कस्टडी के लिए केस लड़ते हैं। जैसा की हम जानते है कि 'हर केस में कुछ टूटता है या छूटता है।' लेकिन यहाँ इसके ठीक विपरीत स्थिति है। यह केस न केवल एक माँ-बेटे के रिश्ते में निकटता लाता है वरन भावात्मक रूप से भी उसे सुदृढ़ बनाता है। यह इस कहानी की खूबी है। यहाँ कहानी की कथावस्तु का संकेत नहीं किया जा रहा है क्योंकि इस कहानी को पढ़ने का जो आनंद है वो कम हो सकता है।

संग्रह की छठी कहानी 'यह पत्र उस तक पहुँचा देना' को सतही ढंग से देखने पर तो 'जैनेट' और 'विजय' की प्रेम कहानी है किंतु लेखिका ने इस कहानी के द्वारा दो देशों की राजनीतिक व्यवस्था, समाजगत ढांचा एवं इन व्यवस्थाओं में विभिन्न विभेद, जिनके कारण कई तरह की जटिलताएँ उत्पन्न होती हैं। घटिया राजनीति, नस्लवाद और रंगभेद के कारण दो भोले-भाले लोगों का जीवन समाप्त होना, इससे दुखद क्या हो सकता है? राजनीति एवं राजनेताओं की स्थिति लगभग सभी जगह एक जैसी है।

'अँधेरा-उजाला' समीक्ष्य-संग्रह की एक अनूठी कहानी है। जब आप इसे पढ़ते हैं तो अनायास ही आपको चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' याद आने लगती है। मोटे तौर पर दोनों कहानियों में कोई साम्य नहीं है। कथावस्तु, पात्र, देशकाल और परिस्थितियाँ सब कुछ अलग हैं। लेकिन इन दोनों कहानियों में कुछ तो ऐसा है जो भावनात्मक स्तर एक समता इनमें दिखने लगती है। 'उसने कहा था' का लहना सिंह और 'अँधेरा-उजाला' कहानी का मनोज दोनों ही पात्र एक ही धरातल पर खड़े दिखाई देते हैं। लहना सिंह अपनी प्रेयसी के लिए मृत्यु का वरण करता है तो मनोज अपनी फैन इला से किये वादे को जीवन पर्यन्त निभाता है क्योंकि-किसी फैन ने उससे वादा लिया था। इसलिए वह निरंतर रियाज़ करता है और गाता है कि वह दुनिया के किसी भी कोने में रहे उसकी गायकी सुनती रहे।" इसके अतिरिक्त इस कहानी में और भी कई आयाम हैं। अँधेरा-उजाला कहानी बाल मनोवज्ञान को भी छूकर जाती है। लेखिका ने अभिभावकों की उस मनोवृत्ति की ओर संकेत किया है,

जब वे अपनी अतृप्त इच्छाओं को बच्चों से पूरा करना चाहते हैं। उससे बच्चे किस मानसिक तनाव से गुज़रते हैं माँ-बाप कभी महसूस ही नहीं कर पाते।

संग्रह की अंतिम कहानी 'एक नई दिशा' भारतीय मूल के परेश और मौली जैसे पात्रों के माध्यम से कही गई एक सकारात्मक कहानी है। पूर्वदीप्ति शैली में लिखी इस कहानी में रीटा भास्कर और उसके पति के रूप बंटी और बबली (ठग) जैसे पात्र हैं, जिनके माध्यम से कहानी आगे बढ़ती है। परेश व मौली एक सजग दम्पत्ति हैं जो कठिनाइयों से जूझना जानते हैं। एक दूसरे का साथ देते हैं। जीवन में आयी किसी जटिलता या नकारात्मकता को भी एक नई और सार्थक दिशा देते हैं। यही इस कहानी का उद्देश्य भी है।

सुधा ओम ढींगरा कहानियाँ लिखती नहीं वे उन कहानियों में स्वयं रच-बस जाती हैं। आपके पास व्यापक अनुभव हैं इसलिए हर कहानी कथावस्तु की दृष्टि से, एक दूसरे से नितांत भिन्न होती है लेकिन एक ऐसा तंतु इन कहानियों में छुपा रहता है जिससे ये लेखक का परिचय स्वयं दे देती हैं। भावों की सशक्त अभिव्यक्ति, भाषा का सरल प्रवाह और बीच-बीच में पंजाबी भाषा का प्रयोग जैसे बघार का काम करता है और कहानियाँ एक सौंधी सी महक से भर जाती हैं। 'वसूली' हो या 'एक गलत कदम' या 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' भारतीयता और भारत से प्रेम इन कहानियों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

शास्त्रीनगर, मेरठ, पिन -250004
-मेल-seema561@gmail-com मो.
-09457034271

साधना के जीवन पर आधारित किताब

फिल्म अभिनेत्री साधना के जन्मदिन पर उनकी बायोग्राफी का विमोचनः

प्रबोध कुमार गोविल द्वारा लिखित साधना की जीवनी 'जनाबे यार मनतुर्की' का विमोचन वेबिनॉर द्वारा किया गया!' लोखंडवाला कला ग्राम' द्वारा आयोजित इस वेबिनॉर में अभिनेता रजा मुराद ने अभिनेत्री साधना के साथ अपने संस्मरण साझा किये! समाजसेवी डॉ. राम जवाहरानी ने उन्हें सिंधी समाज का गौरव बताते हुए दुनिया की अभिनय कला का एक अमर ध्रुव तारा बताया! प्रशासनिक अधिकारी मयंक पांडेय ने साधना के हेयर कट, उनका अपनी आँखों के प्रति सजगता के साथ उनकी दयालुता, करुणा आदि गुणों पर अपना आख्यान प्रस्तुत किया। अभिनेत्री सिमरन आहूजा ने साधना के अभिनय के विशेष आयामों पर बात की! कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे फिल्म प्रोड्यूसर आनंद मनवानी ने साधना के संपूर्ण जीवन और करिश्मा कपूर से उनके खानदानी रिश्ते की व्याख्या की! गायिका सावेरी वर्मा, गायिका सोनल दामनियाँ, संगीतकार रिमी धर, गायिका संध्या मिश्रा, गायिका लक्ष्मी शिरुर, गायिका नीतू मटाई ने साधना पर फिल्माये गये गीतों का गायन किया! लेखक अशोक मनवानी, अटल कृष्ण माथुर, गीता मेरा नाम फिल्म में साधना के बचपन की भूमिका निभाने वाली शमा रानी ने अपने अनुभव सुनाये! सोशल मीडिया में बहुत ही पसंद किये गये इस कार्यक्रम की वीडियो अभी भी वायरल हो रही है.

9 साहित्यिक उपन्यासों समेत लगभग तीन दर्जन पुस्तकों के लेखक साहित्यकार प्रबोध गोविल ने साधना पर लिखी पुस्तक के कारणों पर प्रकाश डाला! भोपाल के एक पुलिस अधिकारी अरुण श्रीवास्तव ने साधना पर बनायी गयी अपनी पेंटिंग प्रस्तुत की। कार्यक्रम में महाराष्ट्र, राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश से विभिन्न महानुभावों ने हिस्सा लिया!

कार्यक्रम का संयोजन और सफल संचालन कवि-पत्रकार अभिलाष अवस्थी ने किया!

अभिलाष अवस्थी
7977058907